मुकदमों का विवरण

यशपाल जैन बनाम.

सुशीला देवी और अन्य (2023 की सिविल अपील संख्या 4296) 20 अक्टूबर, 2023

[एस**.** रवींद्र भाट और अरविंद कुमार**,** जे**.** जे**.]** हेडनोट्स

विचार के लिए विषयःक्या आक्षेपित आदेश उच्च न्यायालय द्वारा सिविल संशोधन में दिए गए दिनांक 1 के आदेश को रद्द करते हुए पारित किया गया था, जिसके तहत निचली विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थी के नेतृत्व में अभियोग आवेदन को स्वीकार करने वाले दिनांक 2 के आदेश को खारिज कर दिया गया था, जिसे कायम रखा गया था या अलग रखा गया था; क्या पिछले 41 वर्षों से मुकदमे के लिए लंबित मुकदमे के कारण समयबद्ध तरीके से कार्यवाही को समाप्त करने के लिए कोई और निर्देश जारी करने की आवश्यकता है?

मुकदमा**-**मूल वादी द्वारा **1982** में मुकदमा संपत्तियों के संबंध में प्रतिवादी संख्या **4** से **32** के पक्ष में प्रथम प्रतिवादी द्वारा निष्पादित बिक्री विलेख को अमान्य घोषित करने के लिए मुकदमा दायर किया गया था और मुकदमा संपत्तियों के कब्जे की डिक्री के लिए**-1982** से **2007** में उनकी मृत्यु तक की कार्यवाही जिसके बाद**,** नीचे की अदालतों द्वारा मूल अधिकार क्षेत्र और पुनरीक्षण अधिकार क्षेत्र दोनों में कई आदेश पारित किए गए थे**-**आक्षेपित आदेश के परिणामस्वरूप अपीलार्थी के नेतृत्व में आवेदन को खारिज कर दिया गया था जिसे मृतक वादी के कानूनी प्रतिनिधि के रूप में रिकॉर्ड पर लाया जाना था**-**स्थिरता।

आयोजित किया गयाःपोषणीय नहीं-तथ्यों पर, उत्तरदाताओं ने स्वयं 2005 के डब्ल्यू. पी. (एम/एस) No.342 में वर्तमान अपीलार्थी को उपरोक्त रिट याचिका में वादी के कानूनी प्रतिनिधि के रूप में लाने के लिए एक आवेदन का नेतृत्व किया और उसी पर मुकदमा चलाया, यह दर्शाता है कि वे वर्तमान अपीलार्थी के मृत वादी के कानूनी प्रतिनिधि होने के तथ्य से परिचित थे, लेकिन फिर भी यह तर्क देने का प्रयास कर रहे हैं कि 'एम. के. जे.' को मृतक वादी के कानूनी प्रतिनिधि के रूप में रिकॉर्ड पर लाया जाना है-इसके अलावा, 949

प्रतिवादियों को यह तर्क देते हुए नहीं सुना जा सकता है कि अपीलविचारण न्यायालय ्ता ने यहां दो एफ़ाई डेविट (आक्षेपित पी-5 और आक्षेपित पी-7) का नेतृत्व किया था, जिसके तहत उसने 'एमकेजे' को मृत वादी के कानूनी प्रतिनिधि के रूप में स्वीकार किया था और इस तरह वह खुद को मृत वादी का कानूनी प्रतिनिधि होने का विचारण न्यायालय ने के लिए नहीं घूम सकता है, क्योंकि अपीलविचारण न्यायालय ्ता के नेतृत्व में एफ़ाई डेविट

एफआई दूर से भी यह सुझाव या संकेत नहीं देता है कि उसने 'एमकेजे' को मृत वादी का कानूनी प्रतिनिधि होने के रूप में स्वीकार किया था-दूसरी ओर, एफ़ाई डेविट ने स्पष्ट रूप से संकेत दिया कि उसने केवल एफ़ाई आरएमडी किया था और इस तथ्य को दोहराया कि वह वसीयत का हस्ताक्षरविचारण न्यायालय ्ता है और कुछ भी अधिक या कुछ भी कम नहीं। [पैरा 12,14-16]

उच्चतम निर्णय द्वारा निर्देश-न्यायिक विलंब-**50** साल से अधिक समय पहले शुरू किए गए कुछ मुकदमे अभी भी लंबित हैं-राष्ट्रीय न्यायिक डेटा ग्रिड **(**एन. जे. डी. जी.**)** से डेटा**,** तीन सबसे पुराने दीवानी और आपराधिक मामलों में उल्लेख किया गया है-न्यायिक विलंब के पीछे के कारक**,** गिने गए-न्यायिक विलंब पर अंकुश लगाने के लिए उठाए गए कदम**,** ऐतिहासिक दृष्टिकोण-दीवानी मुकदमे में देरी के कारण-चर्चा-केस फ्लो मैनेजमेंट सिस्टम नियम-उच्च निर्णय ों के मुख्य न्यायाधीश जहां उक्त नियम अभी बनाए जाने बाकी हैं**,** उनसे ऐसे नियम विरचित करने के लिए तत्काल कदम उठाने का अनुरोध किया गया है-संबंधित उच्च निर्णय ों और समग्र दीवानी निर्णय ों के समक्ष मामलों की राज्यवार लंबितता **16.10.2023;** चरण-वार लंबितता में यह भी कहा गया है-उच्च निर्णय ों के मुख्य न्यायाधीशों को किए गए अनुरोध-उच्च निर्णय ों को जारी किए गए निर्देश **-[**पैरा **18,19,21-26,27-31,33,34]**

यशपाल जैन बनाम सुशीला देवी और अन्य 950 सर्वोच्च न्यायालय रिपोर्ट [2023] 15 एस. सी. आर.

शहरों और अन्य संदर्भों की सूची

अखिल भारतीय न्यायाधीश संघ बनाम भारत संघ [2002] 2 एससीआर 712:(2002) 4 एससीसी 247; टी. अरिवंदम बनाम टी. वी. सत्यपाल और एक और आकाशवाणी (1977)

4 एस. सी. सी. 467; कैलाश बनाम नानकू [2005] 3 एस. सी. आर. 289:(2005) 4 एससीसी 480; सीरम

एडवोकेट्स बार एसोसिएशन, तमिलनाडु बनाम भारत संघ, [2005] 1 पूरक।एससीआर 929:ए. आई. आर. 2005 एस. सी. 3353; भारत कालरा बनाम राज किशन छाबड़ा (2022) एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 613; सलेम बार एसोसिएशन बनाम भारत संघ (2002) 3

पूरक।एससीआर 353:ए. आई. आर. 2003 एस. सी. 189-संदर्भित।शोराज सिंह बनाम चरण सिंह (2018) एस. सी. सी. ऑनलाइन ऑल 6613; एम. महालिंगम बनाम शशिकल आई. एल. आर. कर्नाटक 4055-संदर्भित।

अन्य मामलों के विवरणों में आयातित आदेश और आवेदन आक्षेपित हैं

सिविल अपीलीय अधिकारिता 2023 की सिविल अपील सं. 4296।2013 के डब्ल्यू. पी. एम. एस. सं. 144 में नैनीताल में उत्तराखंड उच्च न्यायालय के दिनांक 28.11.2019 के निर्णय और आदेश से।

रूपः

सुश्री रचना श्रीवास्तव, वरिष्ठ अधिवक्ता, अनुराग कश्यप, श्रीमती मोना के. राजवंशी, अधिवक्ता।अपीलार्थी के लिए।

रामेश्वर प्रसाद गोयल, सुशील कुमार दुबे, अधिवक्ता।उत्तरदाताओं के लिए।

सर्वोच्च
न्यायालय
का
निर्णय/आदेश

निर्णय अरविंद कुमार, जे।

वरीयता

1. 41 वर्षों के बाद भी, इस सूची के पक्षकार अभी भी अंधेरे में हैं और मुकदमेबाजी कर रहे हैं कि एकमात्र वादी श्रीमती उर्मिला देवी (इसके बाद संक्षिप्तता के लिए 'उर्मिला देवी' के रूप में संदर्भित) के कानूनी प्रतिनिधि के रूप में किसे दर्ज किया जाना चाहिए।यह एक उत्कृष्ट मामला है और इस तथ्य का आईना है कि 951 के कारण वादी जनता का न्यायिक प्रक्रियाओं से मोहभंग हो सकता है।

कानूनी कार्यवाही में अत्यधिक देरी करना, अपने तार्किक अंत तक नहीं पहुंचना, और एक या दूसरे पक्ष द्वारा अपनाई गई विलंबकारी रणनीति के कारण धीमी गति से आगे बढ़ना।श्री मंगल सिंह द्वारा निष्पादित बिक्री विलेख (जिसे इसके बाद सुविधा के लिए 'प्रथम प्रतिवादी' के रूप में संदर्भित किया गया है) को प्रतिवादी संख्या 4 से 32 के पक्ष में घोषित करने के लिए राहत देने के लिए 1982 का उक्त मुकदमा, ओएस संख्या 2, स्थापित किया गया था, जो कि वादी अनुसूची में आइटम संख्या 1 से 8 के रूप में वर्णित वाद संपत्तियों के संबंध में, उक्त संपत्तियों का मालिक होने का दावा करके अमान्य होगा; और लागत के साथ वाद संपत्तियों के कब्जे की डिक्री के लिए।

मामले की पृष्ठभूमिः

2. जब उपरोक्त मुकदमा अभी भी शैशवावस्था में था, तब एकमात्र वादी 18.05.2007 पर समाप्त हो गया था।एक श्री मनोज कुमार जैन ने दिनांकित वसीयत पर भरोसा रखते हुए और उक्त पंजीकृत वसीयत के अंतर्गत उत्तराधिकारी होने का दावा करते हुए उन्हें उनके कानूनी उत्तराधिकारी के रूप में प्रतिस्थापित करने के लिए एक आवेदन का नेतृत्व किया। उन्होंने एक हलफनामे का भी नेतृत्व किया जिसमें कहा गया था कि श्री यशपाल जैन (इसके बाद सुविधा के लिए 'अपीलार्थी' के रूप में संदर्भित) उक्त पंजीकृत वसीयत के गवाह थे। प्रतिवादियों ने उक्त आवेदन पर आपत्ति जताते हुए तर्क दिया कि इसमें अपीलकर्ता उप-पंजीयक के कार्यालय में विधिवत पंजीकृत गोद लेने के विलेख पर भरोसा करके स्वर्गीय उर्मिला देवी का गोद लिया हुआ पुत्र था।उक्त कार्यवाही में, वर्तमान अपीलार्थी ने एक हलफनामे का भी नेतृत्व किया जिसमें कहा गया था कि वह उर्मिला देवी द्वारा मनोज कुमार जैन के पक्ष में निष्पादित वसीयत का गवाह था।मनोज कुमार जैन के नेतृत्व में आवेदन पत्र को दिनांक 24.02.2010 के आदेश द्वारा अनुज्ञात गई।

2.1 उक्त आदेश से व्यथित होकर प्रथम प्रतिवादी के कानूनी उत्तराधिकारियों, मंगल सिंह के कानूनी उत्तराधिकारियों ने जिला न्यायाधीश के समक्ष 2010 की सिविल संशोधन संख्या 2 का नेतृत्व किया, जिसे इस आधार पर विचारण न्यायालय के आदेश अपास्त करते हुए के अनुज्ञात गई कि आवेदक ने पुनरीक्षण कार्यवाही के दौरान कहा था कि वह उक्त आवेदन को नहीं दबाएगा और इस तरह विचारण न्यायालय को यशपाल जैन-अपीलार्थी के नेतृत्व वाले आवेदन पर विचार करने का निर्देश दिया और उसे एकमात्र वादी के कानूनी प्रतिनिधियों को रिकॉर्ड पर लाने के लिए आवेदन के साथ देरी की माफी मांगने वाले आवेदन को दर्ज करने की अनुज्ञात , क्योंकि वह पहले ऐसा करने में विफल रहा था।तदनुसार, संशोधन आवेदन को दिनांक 1 के आदेश द्वारा अनुज्ञात गई और श्री यशपाल जैन ने इस तरह के आवेदन में देरी को माफ करने के लिए विचारण न्यायालय के समक्ष एक आवेदन का नेतृत्व किया और प्रार्थना भी की।

/

[2023] 15 एस सी आर।

मुक़दमे को कम करने के लिए अलग रखा जाए।विद्वत विचारण न्यायाधीश ने दिनांक 1 के आदेश के माध्यम से छूट अपास्त करते हुए ते हुए आवेदन को मंजूरी दी और यशपाल जैन को स्वर्गीय उर्मिला देवी के कानूनी प्रतिनिधि के रूप में प्रतिस्थापित करने की अनुज्ञात ।

3. इस मोड़ पर, हम यह इंगित करना चाहते हैं कि आवेदन और निचली अदालतों द्वारा पारित आदेशों का सावधानीपूर्वक अवलोकन इस बात का संकेत देता है कि नीचे दिए गए पक्ष और अदालतें इस आधार पर आगे बढ़ीं कि उन्हें एक कानूनी उत्तराधिकारी के अधिकारों का निर्णय लेना था, जिसे यदि सिविल प्रक्रिया संहिता (इसके बाद 'सी. पी. सी.' के रूप में संदर्भित) में उपयोग की गई अभिव्यक्ति के प्रकाश में देखा जाए तो यह अस्वीकार्य

है, क्योंकि यह धारा 2 (11) के अंतर्गत 'कानूनी उत्तराधिकारी' के लिए संदर्भित नहीं है, बल्कि 'कानूनी प्रतिनिधि' के लिए है, जैसा कि धारा 2 (11) के अंतर्गत कहा गया हैः

"विधि ी प्रतिनिधि का अर्थ है एक ऐसा व्यक्ति जो विधि ी रूप से एक मृत व्यक्ति की संपत्ति का प्रतिनिधित्व करता है, और इसमें कोई भी व्यक्ति शामिल है जो मृतक की संपत्ति के साथ हस्तक्षेप करता है और जहां एक पक्ष प्रतिनिधि चरित्र में मुकदमा करता है या मुकदमा किया जाता है, वह व्यक्ति जिस पर संपत्ति हस्तांतरित होती है।

मुक़दमे में किसी पक्ष की मृत्यु होने पर यह विधि ी प्रतिनिधि होता है जो कार्यवाही पर मुकदमा चलाने का हकदार होता है और विधि ी रूप से मृतक की संपत्ति का प्रतिनिधित्व करता है।जिस कानूनी प्रतिनिधि को रिकॉर्ड में लाया जाता है, उसमें न केवल वसीयत के अंतर्गत एक वसीयतदार शामिल होता है, बल्कि संपत्ति का एक मध्यस्थ भी होता है जो मुकदमा करने और मुकदमा चलाने और/या कार्यवाही जारी रखने का हकदार होगा।ऐसा लगता है कि इस महत्वपूर्ण पहलू को निचली अदालतों ने आसानी से नजरअंदाज कर दिया है।

4. जो भी हो, उपरोक्त उर्मिला देवी, जो उत्तराखंड के गढ़वाल जिले के पट्टी कटुलस्यून के गांव सोनारगाँव में स्थित भूमि की मालिक और मालिक होने का दावा करती है, ने अपने मुकदमे में तर्क दिया है कि मुकदमा अनुसूचियों की संपत्तियों की देखभाल मंगल सिंह-प्रथम प्रतिवादी द्वारा की गई थी और क्योंकि उसने धोखाधड़ी से No.77,3/16 नालियों वाली भूमि का एक भूमिदार सनद प्राप्त किया था, इसलिए उसने 1951 के उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 1 की धारा 137-ए के अंतर्गत तहसीलदार/सहायक कलेक्टर, पौड़ी गढ़वाल के समक्ष एक आवेदन का नेतृत्व किया था, जिसमें प्रथम प्रतिवादी द्वारा प्राप्त उक्त भूमिदारी सनद को चुनौती दी गई थी, जिसे आयोजित किया गया था।उक्त आदेश से संतुष्ट नहीं होने पर, प्रथम प्रतिवादी ने राजस्व बोर्ड के समक्ष दूसरी अपील की थी जिसे मंगल सिंह के पक्ष में अनुज्ञात गई थी, जिसके खिलाफ एक समीक्षा याचिका 953 दायर की गई थी।

इसका नेतृत्व उर्मिला देवी ने किया था जिसे 30.08.1982 पर अनुज्ञात गई थी।उक्त आदेश को मंगल सिंह द्वारा 2005 की रिट याचिका (एम/एस) No.342 (1983 की पुरानी No.14655) में उत्तराखंड उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई थी।उक्त कार्यवाही में मंगल सिंह के कानूनी प्रतिनिधि के नेतृत्व में एक प्रतिस्थापन आवेदन दायर किया गया जिसमें कहा गया कि यशपाल जैन (इसमें अपीलकर्ता) मृतक उर्मिला देवी के कानूनी प्रतिनिधि हैं और उन्होंने उनके नाम को प्रतिस्थापित करने के लिए प्रार्थना की।उक्त आवेदन को दिनांक 1 के आदेश के माध्यम से अनुज्ञात गई और अपीलार्थी को रिट कार्यवाही में उर्मिला देवी के कानूनी प्रतिनिधि के रूप में प्रतिस्थापित किया गया।उक्त क्रम को और कोई चुनौती नहीं है या दूसरे शब्दों में, यह वास्तविकता प्राप्त कर चुका है।5. जैसा कि पहले ही

ऊपर देखा गया है, अपीलार्थी ने मूल वादी-उर्मिला देवी के कानूनी प्रतिनिधि के रूप में प्रतिस्थापन के लिए एक आवेदन का नेतृत्व किया, साथ ही उक्त आवेदन में देरी को माफ करने और उपशमन को दरकिनार करने के लिए एक आवेदन का नेतृत्व किया।उक्त आवेदन को 09.05.2012 दिनांकित आदेश के माध्यम से अनुज्ञात गई।उक्त आदेश से व्यथित होकर, मंगल सिंह के कानूनी प्रतिनिधियों ने जिला न्यायाधीश के समक्ष 2012 की सिविल संशोधन संख्या 4 का नेतृत्व किया, जिन्होंने विचारण न्यायालय के आदेश को लागू किया और दिनांक 1 के आदेश द्वारा पुनरीक्षण याचिका को खारिज कर दिया।मंगल सिंह फाई के कानूनी प्रतिनिधियों ने उच्च न्यायालय के समक्ष 2013 के डब्ल्यू. पी. No.144 का नेतृत्व किया और क्रमशः निचली अदालत और पुनरीक्षण अदालत द्वारा पारित दिनांकित 09.05.2012 और 13.12.2012 के आदेशों को चुनौती दी।उच्च न्यायालय ने आक्षेपित आदेशों को रद्द करके और इसमें अपीलार्थी के आवेदन को खारिज करके रिट याचिका को अनुज्ञात कर लिया, जिससे दिनांकित मूल आदेश को बहाल किया गया जिसमें मनोज जैन को स्वर्गीय उर्मिला देवी के कानूनी प्रतिनिधि के रूप में प्रतिस्थापित करने का आदेश दिया गया था।उसी से व्यथित होने के कारण, वर्तमान अपील का नेतृत्व किया गया है।

दलों के स्वयं के बारे में सुझाव

6. हमने अपीलार्थी की ओर से पेश वरिष्ठ अधिवक्ता सुश्री रचना श्रीवास्तव और प्रत्यर्थियों की ओर से पेश विद्वान अधिवक्ता श्री रामेश्वर प्रसाद गोयल की दलीलें सुनी हैं।

7. अपीलार्थी की ओर से पेश वरिष्ठ अधिवक्ता सुश्री रचना श्रीवास्तव का यह तर्क है कि उच्च विचारण न्यायालय ने निचली अदालत और निचली अदालत के निष्कर्षों को प्रभावित करने में गंभीर त्रुटि की है।

/

पुनरीक्षण न्यायालय , जिसके तहत विवेकाधीन शक्ति का प्रयोग उपशमन अपास्त करते हुए ते हुए और इसमें अपीलार्थी के आवेदन को मृतक उर्मिला देवी के कानूनी प्रतिनिधि के रूप में रिकॉर्ड पर लाने की अनुमति देते हुए किया गया था; उच्च न्यायालय ने इस तथ्य पर विचार नहीं करने में गलती की कि निचली अदालतों ने एक स्पष्ट निष्कर्ष दर्ज किया था कि अपीलार्थी मृतक वादी का एकमात्र जीवित कानूनी प्रतिनिधि था और इस तरह उसे पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा पुष्टि किए गए विचारण न्यायालय द्वारा पारित सुविचारित आदेश में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए था; वह यह भी तर्क देगी कि इस मुकदमे में प्रतिवादी जो 2005 के डब्ल्यू. पी. (एम/एस) 342 (1983 की पुरानी संख्या 14655) में रिट याचिकाकर्ता थे, उन्होंने ऐप को प्रतिस्थापित किया था।इसलिए, यह तर्क दिया जाता है कि आक्षेपित आदेश को दरकिनार किया जा सकता है।

8. इसके विपरीत, प्रत्यर्थियों की ओर से उपस्थित विद्वान वकील, श्री रामेश्वर प्रसाद गोयल, आक्षेपित आदेश का समर्थन करते हैं और तर्क देते हैं कि 2013 की रिट याचिका में, अपीलकर्ता, जो उसमें एक पक्ष था, ने जवाबी-शपथपत्र दायर नहीं किया था और इस तरह उच्च विचारण न्यायालय ने दर्ज किया था कि याचिका के कथनों का उल्लंघन स्वीकार करने के बराबर होगा और इस तथ्य पर भी ध्यान दिया था कि अपीलकर्ता ने निचली अदालत के समक्ष 25.10.2008 पर एक शपथपत्र दायर किया था, जिसके तहत उसने मृतक उर्मिला देवी द्वारा निष्पादित 19.05.1999 की वसीयत को स्वीकार कर लिया है और इस तरह मनोज कुमार जैन के उर्मिला देवी के कानूनी उत्तराधिकारी होने के रुख का समर्थन किया है।वह इस न्यायालय का ध्यान 1982 के ओएस नंबर 2 में स्वयं अपीलार्थी द्वारा दायर एक अन्य शपथपत्र की ओर भी आकर्षित करेंगे, जिसके तहत उन्होंने फिर से मृतक उर्मिला देवी के कानूनी प्रतिनिधि के रूप में श्री मनोज कुमार जैन के प्रतिस्थापन का समर्थन किया है। इसलिए, उनका तर्क है कि उच्च न्यायालय द्वारा कोई अवैधता नहीं की गई है।यह आगे तर्क दिया जाता है कि अपीलार्थी को 1982 के ओएस नंबर 2 की जानकारी थी और इस तरह वह देरी के लिए अज्ञानता का अनुरोध नहीं कर सकता है।अंत में, गोद लेने को इस आधार पर चुनौती देते हुए कि यह अपीलार्थी को रिकॉर्ड में लाने का आधार नहीं हो सकता है, उन्होंने इस अपील को अस्वीकार करने की मांग की है।

955

यशपाल जैन बनाम सुशीला देवी और अन्य [अरविंद कुमार, जे.] 956

समन्वय के लिए बिंदु

9. पक्षों की ओर से उपस्थित विद्वान वकीलों को सुनने के बाद और बार में उठाए गए प्रतिद्वंद्वी तर्कों पर सावधानीपूर्वक और चिंतित विचार करने के बाद, हमारा विचार है कि निम्नलिखित बिंदु हमारे विचार के लिए उत्पन्न होंगेः

(i) क्या 2013 की रिट याचिका (एम/एस) No.144 में उच्च न्यायालय द्वारा 2012 की सिविल संशोधन संख्या 4 में दिए गए दिनांकित 13.12.2012 के आदेशों को रद्द करते हुए पारित किया गया आक्षेपित आदेश, जिसमें निचली विचारण न्यायालय द्वारा पारित आदेश, जिसमें अपीलार्थी के नेतृत्व में अभियोग आवेदन को खारिज करने की अनुमति दी गई थी, को कायम रखा जाना है या खारिज कर दिया जाना है?

((ii) क्या पिछले 41 वर्षों से मुकदमे के लिए लंबित 1985 के वाद संख्या 2 के कारण समयबद्ध तरीके से कार्यवाही को समाप्त करने के लिए कोई और निर्देश या निर्देश जारी करने की आवश्यकता है?

((ग) कौन-सा आदेश?

आरईःबिंदु संख्या **(i)**

10. यह विवाद में नहीं है कि श्रीमती। उर्मिला देवी ने मंगल सिंह और अन्य लोगों के खिलाफ मुकदमा अनुसूची संपत्तियों के संबंध में 1982 की ओ. एस. संख्या 2 का मुकदमा दायर किया था, जैसा कि शिकायत अनुसूची में वर्णित है, जिसमें मंगल सिंह द्वारा प्रतिवादी के पक्ष में निष्पादित बिक्री विलेखों को 32 तक घोषित करने के लिए, जैसा कि शिकायत अनुसूची 1 से 18 में उल्लेख किया गया है, अमान्य घोषित किया गया था। और उक्त वाद के लंबित रहने के दौरान वादी-श्रीमती। उर्मिला देवी का निधन 18.05.2007 पर हुआ।उनके निधन पर श्री मनोज कुमार जैन ने 17.05.2008 पर एक आवेदन का नेतृत्व किया।

उसके कानूनी उत्तराधिकारी के रूप में प्रतिस्थापन और के अंतर्गत सही उत्तराधिकारी का दावा करने के लिए

दिनांकित होगा 19.05.1999।इस आवेदन के बाद अपीलार्थी (यशपाल जैन) का दिनांक 25.10.2008 का एक हलफनामा आया जिसमें कहा गया था कि उसकी माँ उर्मिला देवी ने मनोज कुमार जैन के पक्ष में दिनांकित 19.05.1999 की एक वसीयत को निष्पादित किया था और इसके तहत यह भी कहा गया था कि वसीयत विधिवत पंजीकृत थी।प्रतिवादी के कानूनी उत्तराधिकारियों ने अन्य बातों के साथ-साथ यह तर्क देते हुए उक्त प्रतिस्थापन पर आपत्ति जताई कि वर्तमान अपीलार्थी उर्मिला देवी का गोद लिया हुआ पुत्र है और कहा कि गोद लेने का विलेख उप-पंजीयक के कार्यालय में विधिवत दर्ज किया गया था।यह भी तर्क दिया गया कि श्री राजेंद्र प्रसाद जैन उर्मिला देवी के पावर ऑफ अटॉर्नी के धारक थे और 18.02.2001 पर उनकी (राजेंद्र प्रसाद) मृत्यु पर, उन्होंने एक और पावर ऑफ अटॉर्नी का निष्पादन किया था

/

[2023] 15 एस सी आर।

विरेन्द्र कुमार जैन की नियुक्ति पर और उसी के आधार पर उनकी पत्नी का नाम उसके तहत दर्शाई गई भूमि के संबंध में परिवर्तित हो गया।इसलिए, यह तर्क दिया गया कि मनोज कुमार जैन द्वारा प्रस्तावित वसीयत मनगढ़ंत और जाली थी।इसलिए यह प्रार्थना की गई कि उर्मिला देवी के कानूनी प्रतिनिधि के रूप में प्रतिस्थापित किए जाने के मनोज कुमार जैन के दावे को खारिज किया जाए।फिर भी एक अन्य एफ़ी डेविट का नेतृत्व अपीलार्थी ने 21.08.2009 पर किया था, जिसमें पहले के एफ़ी डेविट दिनांक 25.10.2008 की सामग्री को दोहराया गया था।दूसरे शब्दों में, यह तर्क दिया गया कि मनोज कुमार जैन उर्मिला देवी के कानूनी प्रतिनिधि नहीं थे।

11. विद्वत विचारण न्यायाधीश ने विलंब को लागत के साथ माफ करके प्रतिस्थापन के लिए दिनांक 1 के आदेश द्वारा आवेदन को अनुज्ञात और मृत वादी उर्मिला देवी के कानूनी प्रतिनिधि के रूप में मनोज कुमार के प्रतिस्थापन का निर्देश दिया।

12. मंगल सिंह के कानूनी प्रतिनिधियों द्वारा 2010 के सिविल संशोधन संख्या 2 में वन-रहित आदेश को चुनौती दी गई, जिसके परिणामस्वरूप इसे दिनांक 2 के आदेश के माध्यम से अनुज्ञात गई और निचली विचारण न्यायालय के दिनांक 1 के आदेश को इस तथ्य पर ध्यान देते हुए दरकिनार कर दिया गया कि मनोज कुमार जैन ने अपने आवेदन 27/सी में हलफनामे के साथ कहा था कि वह प्रतिस्थापन आवेदन पर दबाव नहीं डालेंगे।अपीलार्थी को निचली न्यायालय के समक्ष एक पक्ष के रूप में पक्षकार बनाने के लिए आवेदन करने की स्वतंत्रता दी गई थी।इस पृष्ठभूमि में अपीलार्थी ने उर्मिला देवी के कानूनी प्रतिनिधि के रूप में प्रतिस्थापन के लिए एक आवेदन का नेतृत्व किया और यह आवेदन देरी को माफ करने और उपशमन को दरकिनार करने के लिए आवेदन के साथ आई. डी. 1 पर दायर किया गया, जिसका विरोध प्रथम प्रतिवादियों के कानूनी प्रतिनिधियों ने पहली बार आपत्तियों द्वारा किया था और यह तर्क देते हुए कि यशपाल जैन के नेतृत्व में आवेदन बनाए रखने योग्य नहीं है। पक्षकारों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ताओं को सुनने के बाद ट्रायल जज ने दिनांक 1 के एक विस्तृत आदेश द्वारा देरी को माफ कर दिया और अपीलार्थी के आवेदन को मृतक-वादी उर्मिला देवी के कानूनी प्रतिनिधि के रूप में रिकॉर्ड पर लाने की अनुज्ञात ।यह आदेश मंगल सिंह के कानूनी प्रतिनिधियों के नेतृत्व में 2012 के नागरिक संशोधन संख्या 4 में दिनांक 1 के आदेश द्वारा लागू किया गया था।

13. इस समय यह उल्लेख करना उचित है कि उर्मिला देवी के जीवन काल के दौरान यू. पी. अधिनियम संख्या 1951 की धारा 137-ए के अंतर्गत तहसीलदार/सहायक कलेक्टर, पौड़ी गढ़वाल 957 के समक्ष एक आवेदन दायर किया गया था।

यह तर्क देते हुए कि भूमिदारी सनद मंगल सिंह द्वारा प्राप्त की गई थी, जिसमें Nos.77,3/16 नलिस वाली भूमि के संदर्भ में, जालसाजी को अपनाकर, जिसे स्वीकार कर लिया गया। तहसीलदार के आदेश के विरुद्ध सहायक कलेक्टर के समक्ष मंगल सिंह के नेतृत्व में की गई अपील का कोई परिणाम नहीं निकला, जिसके परिणामस्वरूप राजस्व बोर्ड के समक्ष दूसरी अपील दायर की गई, जिसके परिणामस्वरूप मंगल सिंह के पक्ष में उक्त अपील की अनुज्ञात गई।द्वितीय अपीलीय प्राधिकरण के आदेश के खिलाफ समीक्षा याचिका दायर करने की अनुज्ञात गई और इसे मंगल सिंह ने 2005 (1983 का पुराना No.14655) के WP (M/S) No.342 में चुनौती दी थी।उक्त रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान, जैसा कि पहले देखा गया था, उर्मिला देवी की अवधि समाप्त हो गई और प्रतिस्थापन के लिए एक आवेदन मंगल सिंह (जो इसमें प्रतिवादी <आईडी1 से 5 हैं) के उन्हीं कानूनी प्रतिनिधियों के नेतृत्व में अनुलग्नक पी-10 के माध्यम से दायर किया गया, जिसमें विशेष रूप से प्रतिवादी संख्या 4 (उसमें) श्रीमती का नाम हटाने का अनुरोध किया गया था। उर्मिला देवी और उनके स्थान पर यशपाल जैन (यहाँ अपीलार्थी) को प्रतिस्थापित किया गया।इस आवेदन की अनुज्ञात दिनांक 24.02.2012 के आदेश द्वारा दी गई, जैसा कि अपीलार्थी के प्रत्युत्तर के

साथ संलग्न अनुलग्नक आर. ए./2 में दिया गया है।मामले के इस दृष्टिकोण में, उत्तरदाताओं द्वारा यहाँ यह लाभप्रद नहीं कहा जा सकता है कि अपीलार्थी को मृत उर्मिला देवी के कानूनी प्रतिनिधि के रूप में प्रतिस्थापित नहीं किया जाना है।इसी ठोस कारण से, विद्वत विचारण न्यायाधीश ने दिनांक 1 के आदेश के माध्यम से प्रतिस्थापन की अनुज्ञात और अपीलार्थी को मृत वादी-उर्मिला देवी के कानूनी प्रतिनिधि के रूप में प्रतिस्थापित करने की अनुज्ञात ।ठीक है, इसलिए निचली न्यायालय के इस आदेश को पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा दिनांक 13.12.2012 के आदेश के माध्यम से लागू किया गया।इस मोड़ पर और दोहराने की कीमत पर यह ध्यान रखना उचित और उचित होगा कि मनोज कुमार जैन, जिन्होंने शुरू में प्रतिस्थापन के लिए एक आवेदन का नेतृत्व किया था, जिसे निचली विचारण न्यायालय द्वारा दिनांक 1 के आदेश द्वारा अनुज्ञात गई थी, जो आदेश 2010 के सिविल संशोधन संख्या 2 में किया गया था और उक्त कार्यवाही में एक आवेदन आया था, जिसके नेतृत्व में उक्त मनोज कुमार जैन ने कहा था कि वह उर्मिला देवी के कानूनी प्रतिनिधि के रूप में प्रतिस्थापित किए जाने के लिए उनके नेतृत्व वाले आवेदन पर दबाव डालने का इरादा नहीं रखते हैं।इस तथ्य ने पुनरीक्षण न्यायालय को दिनांक 02.12.2011 के आदेश के माध्यम से मामले को निचली विचारण न्यायालय में वापस भेजने के लिए भी राजी किया।

14. इस तथ्यात्मक परिदृश्य में, प्रतिवादियों को यह तर्क देते हुए नहीं सुना जा सकता है कि अपीलकर्ता ने दो मामलों (अनुलग्नक पी-5 और अनुलग्नक पी-7) का नेतृत्व किया था, जिसके तहत उसने मनोज कुमार जैन को मृतक उर्मिला देवी के कानूनी प्रतिनिधि के रूप में स्वीकार किया था और इस तरह वह खुद को उर्मिला देवी का कानूनी प्रतिनिधि होने का दावा करने के लिए नहीं घूम सकता है।

/

[2023] 15 एस सी आर।

यह कारण कि अपीलार्थी यशपाल जैन के नेतृत्व में एफ. आई. डी. आई. दूर से यह सुझाव या संकेत नहीं देता है कि उसने मनोज कुमार जैन को उर्मिला देवी का कानूनी प्रतिनिधि होने के रूप में स्वीकार किया है।दूसरी ओर, कहा गया एफ़ी डेविट्स, जिसे हमारे द्वारा पढ़ा गया है, स्पष्ट रूप से इंगित करता है कि उसने केवल एफ़ी रेमड किया है और इस तथ्य को दोहराया है कि वह उक्त वसीयत का हस्ताक्षरकर्ता है और कुछ भी अधिक या कुछ भी कम नहीं है।

15. इसमें प्रत्यर्थियों की ओर से पेश विद्वान वकील श्री रामेश्वर प्रसाद गोयल ने यह भी तर्क दिया है कि रिट याचिका के कथनों को न बदलने के कारण इसकी सामग्री को सही और सही माना जाना चाहिए, हालांकि यह पहली बार में एक आकर्षक प्रस्ताव प्रतीत होता है, लेकिन इसे इस सरल कारण से स्वीकार नहीं किया जा सकता है कि सहमति से अधिकार क्षेत्र प्रदान नहीं होता है।अन्यथा भी, अभिलेख स्पष्ट रूप से इंगित करते हैं कि मनोज कुमार जैन ने स्वयं 2010 के सिविल संशोधन संख्या 2 में पुनरीक्षण न्यायालय के समक्ष एक

आवेदन का नेतृत्व किया था, जिसमें कहा गया था कि वह प्रतिस्थापन के लिए अपने नेतृत्व वाले आवेदन पर दबाव नहीं डालेंगे और उच्च न्यायालय के लिए अपीलार्थी की याचिका को स्वीकार करने के लिए यह पर्याप्त था या दूसरे शब्दों में, उसे निचली विचारण न्यायालय के आदेश को बनाए रखना चाहिए था और अपीलार्थी को मृत उर्मिला देवी के कानूनी प्रतिनिधि के रूप में रिकॉर्ड पर लाने का आदेश देना चाहिए था।

16. पुनरावृत्ति की कीमत पर, यह ध्यान देने की आवश्यकता है कि उत्तरदाताओं ने स्वयं 2005 के डब्ल्यू. पी. (एम/एस) No.342 में वर्तमान अपीलार्थी (यशपाल जैन) को रिट याचिका (एम/एस) 342/2005 में अपने कानूनी प्रतिनिधि के रूप में लाने के लिए एक आवेदन का नेतृत्व किया है और उसी पर मुकदमा चलाया है, यह दर्शाता है कि वे इस तथ्य से परिचित थे कि वर्तमान अपीलार्थी मृतक उर्मिला देवी का कानूनी प्रतिनिधि है, लेकिन फिर भी वे यह तर्क देने का प्रयास कर रहे हैं कि मनोज कुमार जैन को उर्मिला देवी के कानूनी प्रतिनिधि के रूप में रिकॉर्ड पर लाया जाना है।इस पृष्ठभूमि में आक्षेपित आदेश, जिसके परिणामस्वरूप अपीलार्थी के नेतृत्व में उर्मिला देवी के कानूनी प्रतिनिधि के रूप में दर्ज किए जाने वाले आवेदन को अस्वीकार कर दिया गया है, यदि यह कायम रहता है, तो इसके परिणामस्वरूप मृतक वादी की संपत्ति का प्रतिनिधित्व नहीं किया जाएगा, जिसके परिणामस्वरूप वाद समाप्त हो जाएगा या प्रतिवादियों द्वारा मूक मृत्यु के लिए रखा जाएगा, जिसमें वाद में किए गए दावे को गुण-दोष के आधार पर निर्णय नहीं दिया जाएगा।इसलिए, बिंदु संख्या (i) का उत्तर अपीलार्थी के पक्ष में और उत्तरदाताओं के खिलाफ दिया जाता है और इसलिए, आक्षेपित आदेश को दरकिनार कर दिया जाता है।

17. जहाँ तक वाद अनुसूची संपत्तियों पर अपीलार्थी के अधिकार का प्रश्न है, हमारा विचार है कि गोद लेने के आधार पर, यह एक ऐसा मुद्दा है जो विद्वत विचारण विचारण न्यायालय के समक्ष व्यापक रूप से होगा और कथित रूप से उर्मिला देवी द्वारा मनोज कुमार जैन के पक्ष में निष्पादित की गई वसीयत की सत्यता का उचित कार्यवाही में निर्णय लिया जाना है और इस प्रकार हम उस संबंध में कोई भी राय व्यक्त करने से बचते हैं और दोनों पक्षों की दलीलें खुली रखी जाती हैं।

आरईःबिंदु संख्या **(ii)**

18. हाथ में मौजूद मामले के कागजात से पता चलेगा कि पक्षों के बीच विवाद मूल वादी श्रीमती द्वारा मुकदमे की स्थापना की तारीख 02.02.1982 से संबंधित है। उर्मिला देवी। मुकदमे के चरण के बारे में, कि क्या मुकदमा शुरू हो गया है या अन्यथा, इस न्यायालय के समक्ष उपलब्ध सामग्री मौन है, लेकिन तथ्य यह है कि कार्यवाही 1982 से उर्मिला देवी की मृत्यु तक लंबी हो गई है और उसके बाद यह धीमी गति से आगे बढ़ी है या दूसरे शब्दों में,

ऐसा लगता है कि मुकदमेबाजी को उसके तार्किक अंत तक नहीं ले जाया गया है क्योंकि सबसे अच्छी तरह से ज्ञात है।मूल वादी की मृत्यु ने मुकदमेबाजी का एक दौर शुरू कर दिया और इसके परिणामस्वरूप, नीचे की अदालतों द्वारा मूल अधिकार क्षेत्र और पुनरीक्षण अधिकार क्षेत्र दोनों में कई आदेश पारित किए गए, जो उच्च न्यायालय और अंततः वर्तमान कार्यवाहियों द्वारा इस न्यायालय के समक्ष भी पहुंचे।देरी का कारण असंख्य रहा है।यही कारण है कि हमने इस निर्णय की शुरुआत में अपनी पीड़ा व्यक्त की है कि विलंब के कारण वादी जनता का न्याय वितरण प्रणाली से मोहभंग होने की संभावना है।यह ध्यान देने योग्य होगा कि 50 साल से अधिक समय पहले शुरू किए गए कुछ मुकदमे अभी भी लंबित हैं।राष्ट्रीय न्यायिक डेटा ग्रिड (एन. जे. जी. डी.) से निकाले गए आंकड़ों के अनुसार, हमने यहां तीन सबसे पुराने दीवानी और आपराधिक मामलों को नोट किया हैः

शीर्ष **3** नागरिक मामले **1.**पश्चिम बंगाल

(क) सिविल जज सीनियर डिवीजन, मालदा-1952 का विभाजन मुकदमा No.30-04.04.1952 पर पंजीकृत

(ख) सिविल जज, सीनियर डिवीजन, मेदिनीपुर-2017 का अन्य मुकदमा No.39-15.09.1953 पर पंजीकृत।

2. उत्तर प्रदेश

सिविल जज, जूनियर डिवीजन, वाराणसी-1953 का मूल सूट No.319-02.07.1953 पर पंजीकृत

शीर्ष **3** स्थायी मामलों **(1)** महाराष्ट्र

(क) मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, अमरावती-1959 का आर. सी. सी. No.2319-11.04.1959 पर पंजीकृत

(ख) सी. जे. जे. डी. और जे. एम. एफ. सी. मेहकर-1960 का आर. सी. सी. 06.10.1959 पर पंजीकृत

(ग) मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, अमरावती-1961 का आर. सी. सी. No.778-30.08.1961 पर पंजीकृत

न्यायिक विलंब के पीछे अंतर्निहित कारक

19. देरी के कारणों में विधि में ही कई खामियां, अनावश्यक और भारी कागजी कार्य, गवाहों की अनुपस्थिति, बिना किसी उचित कारण के मांगी गई और दी गई स्थगन के साथ-साथ समन की सेवा में देरी, सिविल प्रक्रिया संहिता (जिसे इसके बाद 'सी. पी. सी.' कहा गया है) और दंड प्रक्रिया संहिता (जिसे इसके बाद 'आई. डी. 1' कहा गया है) के प्रावधानों के कार्यान्वयन में कमी, जैसा भी मामला हो, शामिल हैं।ये केवल उदाहरणात्मक हैं और संपूर्ण

नहीं हैं।ऐसा नहीं है कि न्याय वितरण प्रणाली में तेजी लाने के लिए प्रभाव की कोई कमी रही है।हालाँकि, अब तक किए गए प्रयासों के सीमित परिणाम मिले हैं।मामलों दंड प्रक्रिया संहिता तेजी से निपटारे दंड प्रक्रिया संहिता लिए लगातार बढ़ती मांगों को पूरा करने दंड प्रक्रिया संहिता लिए बार-बार सी. पी. सी. और आई. डी. 1 दंड प्रक्रिया संहिता विभिन्न प्रावधानों में संशोधन किया गया है और परिणाम उत्साहजनक नहीं हैं।न केवल सभी स्तरों पर लंबित मामलों के भारी ढेर को दूर करने के लिए सक्रिय कदम उठाने की तत्काल आवश्यकता है, बल्कि सभी हितधारकों द्वारा आत्मविश्लेषण किया जाना चाहिए ताकि वादी जनता की आकांक्षाओं को पूरा किया जा सके जो केवल त्वरित न्याय की मांग करेंगे और कार्यवाही में देरी करने के लिए अपनाए गए तरीकों को कम किया जा सके जो वादी जनता के कुछ वर्ग या वर्ग के अनुकूल हो सकते हैं।जब न्याय के लाखों उपभोक्ता पहली बार अदालतों के दरवाजे खटखटाकर अपने मामलों को निपटाते हैं, तो वे त्वरित न्याय की उम्मीद करते हैं।इस प्रकार, यह सुनिश्चित करने के लिए सभी हितधारकों पर एक बड़ी जिम्मेदारी है कि न्याय में देरी के कारण इस प्रणाली में लोगों का विश्वास कम न हो।यह ध्यान रखना आवश्यक है कि भारत में लगभग 6 प्रतिशत आबादी मुकदमेबाजी से प्रभावित है, ऐसे परिदृश्य में 961

यशपाल जैन बनाम सुशीला देवी और अन्य [अरविंद कुमार, जे.] 962

विधि के शासन द्वारा शासित राष्ट्र के जीवन में अदालतें महत्वपूर्ण भूमिका निभाएंगी। समाज में शांति और शांति और नागरिकों के बीच सौहार्दपूर्ण संबंध न्याय के प्रभावी प्रशासन और इसकी वितरण प्रणाली के कारण प्राप्त होते हैं, यहां तक कि किसी देश का आर्थिक विकास भी मजबूत न्याय वितरण प्रणाली पर निर्भर करता है जो हमारे देश में है।

20. जब प्रभावशीलता आधुनिक सभ्यता की पहचान बन गई है और जीवन के सभी क्षेत्रों में मुकदमों और आपराधिक कार्यवाही के मुकदमे के समय को कम करके न्याय प्रदान करने की गति को तेज करने की तत्काल आवश्यकता है और साथ ही इस तरह के मुकदमे के ऑफ शूट भी हैं जिसके परिणामस्वरूप उनमें संशोधन, अपील आदि उत्पन्न होते हैं।

न्यायिक देरी पर अंकुश लगाने के लिए उठाए गए कदमों का एक ऐतिहासिक दृष्टिकोण

21. देरी का मुद्दा सदियों से सभी हितधारकों को परेशान कर रहा है।बहुत पहले वर्ष 1924 अंतर्गत , न्यायमूर्ति रैंकिन की अध्यक्षता अंतर्गत "अदालतों अंतर्गत लेन-देन किए गए व्यवसाय के अधिक त्वरित, किफायती और संतोषजनक प्रेषण" को लाने के लिए आवश्यक परिवर्तनों और सुधारों से संबंधित मुद्दों की जांच करने के लिए नागरिक न्याय समिति के रूप अंतर्गत जानी जाने वाली एक समिति का गठन किया गया था।ढाई साल से अधिक की अवधि के मामलों के निपटारे में देरी एक महत्वपूर्ण चिंता का विषय था और उक्त समिति ने इस बात पर जोर दिया कि "जहां बकाया राशि असहनीय है, वहां विधियों में सुधार से ही राहत मिल सकती है।यह ठीक नहीं हो सकता। "1 केंद्र सरकार ने न्यायमूर्ति एस. आर. दास

की अध्यक्षता अंतर्गत वर्ष 1949 अंतर्गत उच्च न्यायालय बकाया समिति के रूप अंतर्गत जानी जाने वाली एक समिति का गठन किया।1979 में विधि आयोग ने

भारत सरकार ने 'विचारण न्यायालयों में विलंब और बकाया' पर अपनी 77 वीं रिपोर्ट में कहा कि

दीवानी या आपराधिक मामलों में देरी ने न्यायिक प्रणाली के बारे में आम जनता के बीच विश्वास को कम कर दिया है।इस बात पर जोर दिया गया कि यदि मामला पंजीकरण की तारीख से एक वर्ष के भीतर निपटाया नहीं गया तो दीवानी मामलों को व्यपगत माना जाना चाहिए, जबकि आपराधिक मामले का निपटान छह महीने के भीतर किया जाना चाहिए और सत्र सुनवाई के मामले में यह एक वर्ष से अधिक नहीं होना चाहिए।रिक्तियों को समय पर भरने, अतिरिक्त और तदर्थ न्यायाधीशों की नियुक्ति करने और समग्र न्यायिक शक्ति बढ़ाने का भी सुझाव दिया गया।समिति की कुछ प्रमुख सिफारिशें इस प्रकार थीं:

1 सिविल न्याय समिति, 1924

/

[2023] 15 एस सी आर।

“((i) समाज की आधुनिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए न्यायिक प्रणाली में सुधार।

((ii) मामलों की जांच में एक सप्ताह से अधिक समय नहीं लगना चाहिए।(iii) अभियोग की तिथि बताए बिना, अभियोग के साथ अभियोग के चरण में समन और नोटिस संलग्न किए जाने चाहिए।

((iv) दीवानी और आपराधिक मामलों की कार्यवाही में प्रक्रियात्मक सुधार। "22. भारत के विधि आयोग की 79 वीं रिपोर्ट से संबंधित है -

“उच्च न्यायालयों और अपीलीय न्यायालयों में विलंब और बकाया "जो कब

जैसा कि उपरोक्त 77 वीं रिपोर्ट के साथ पढ़ा गया है, प्रबंधकीय निर्णय के लिए एक चरण-दर-चरण नियमावली प्रदान की गई है, जिसमें विचारण न्यायालयों, उच्च न्यायालयों और अन्य अपीलीय न्यायालयों द्वारा अनुसरण किए जाने वाले मामलों के त्वरित निपटान को सुनिश्चित करने के लिए परीक्षण प्रक्रिया के लिए ऊपरी समय सीमा निर्धारित की गई है। इसकी सिफारिशें उन तरीकों से होती हैं जिनमें न्यायाधीशों को समन की सेवा में तेजी लानी चाहिए और डिक्री का मसौदा तैयार करना चाहिए और इसमें सुझाव शामिल हैं कि उन्हें सुलह के लिए अधिक सक्रिय होना चाहिए।अन्य उल्लेखनीय सिफारिशों में शामिल हैं:

“(i) प्रक्रिया सर्वर के काम की निगरानी करने वाले प्रशासनिक न्यायाधीशों की नियुक्ति;

((ii) तारीखों का निर्धारण पीठासीन अधिकारी द्वारा किया जाना चाहिए न कि पाठकों द्वारा, मामलों को जानबूझकर तब नहीं चलाया जाना चाहिए जब उनकी संभावनाओं को कम के लिए लिया जा रहा हो और अदालतों के समक्ष लंबित मामलों की संख्या का एक मानक तय किया जाना चाहिए और जब भी ऐसे संकेत हों कि मामलों की संख्या मानक से परे जाएगी, तो अतिरिक्त अदालतें स्थापित की जानी चाहिए। "

23. न्यायपालिका में मानव शक्ति नियोजन पर 120 वें विधि आयोग की रिपोर्टः'ए ब्लूप्रिंट' ने सिफारिश की कि न्यायिक प्रणाली पर भारी लंबित मामलों को दूर करने का सबसे प्रभावी तरीका न्यायिक देरी को कम करना है।इसमें आगे कहा गया है कि न्यायपालिका पर हर साल बड़ी संख्या में मामलों का बोझ होता है, जो पहले से ही तनावग्रस्त प्रणाली को बाधित करते हैं।रिपोर्ट में कहा गया है कि 2002 में, जब न्यायाधीशों की जनसंख्या का अनुपात 13 न्यायाधीशों से 10,00,000 लोगों के बीच था, तब सर्वोच्च न्यायालय ने

अखिल भारतीय न्यायाधीश संघ बनाम भारतीय संघ (2002) में अनुशंसित

4 एस. सी. सी. 247, प्रति 10,00,000 लोगों के अनुपात को कम से कम 50 न्यायाधीशों तक बढ़ाने के लिए।

963

यशपाल जैन बनाम सुशीला देवी और अन्य [अरविंद कुमार, जे.] 964

24. आपराधिक न्याय प्रणाली के सुधारों पर गठित मलिमथ समिति ने अपनी रिपोर्ट में आपराधिक न्याय प्रणाली के लिए कई सिफारिशों का सुझाव दिया, हालांकि उनमें से कुछ को दीवानी मुकदमेबाजी में भी लागू किया जा सकता हैः

1. लिखित बयानों, अभिवचनों के संशोधन, समन की सेवा आदि के लिए समय सीमा निर्धारित की जानी चाहिए।

2. जहाँ तक संभव हो, पक्षों को न्यायालय के बाहर मामलों को तय करने या निपटाने का प्रयास करना चाहिए और उसी उद्देश्य को पूरा करने के लिए सी. पी. सी. में धारा 89 पेश की गई थी।

3. विधि के समक्ष उपस्थित होने के बजाय आयोग को जारी करके साक्ष्य दर्ज करना।उसी उद्देश्य के लिए सी. पी. सी. की धारा 75 के अंतर्गत साक्ष्य एकत्र करने के लिए आयोग जारी किया जा सकता है।

4. विधि के समक्ष मौखिक तर्क के लिए समय सीमा प्रदान करने की आवश्यकता है।

5. अपील के अधिकार पर प्रतिबंध।

25. इसी तरह, दिल्ली उच्च न्यायालय ने एक प्रायोगिक परियोजना शुरू की जिसका शीर्षक था

‘‘शून्य विचाराधीनता न्यायालय परियोजना रिपोर्ट '2 जिसके तहत 22 विशिष्ट सी पायलट और

कानूनी मामलों के जीवन चक्र की सावधानीपूर्वक जांच करने के लिए डेटा एकत्र करने के लिए संदर्भ अदालतों को भेजा गया था।अपने मूल में, परियोजना ने यह समझने की कोशिश की कि किसी भी बैकलॉग के अभाव में कानूनी प्रणाली के माध्यम से मामले कैसे आगे बढ़े। प्रायोगिक परियोजना से एकत्र किए गए आंकड़ों से कुछ प्रमुख सिफारिशों के सुझाव मिले जिनमें मुख्य रूप से न्यायिक शक्ति का आकलन शामिल था, जिसे रिपोर्ट के अनुसार, देरी के कारण के लिए एक महत्वपूर्ण विशेषता माना जाता है।इस संबंध में रिपोर्ट ने अलग-अलग न्यायालय ों में लंबित मामलों को संभालने के लिए एक इष्टतम न्यायाधीश संख्या तक पहुंचने का सुझाव दिया और अलग-अलग न्यायालय ों के लिए आदर्श न्यायाधीशों की संख्या प्रदान की।रिपोर्ट में इस बात पर भी प्रकाश डाला गया है कि आपराधिक मामलों में, अभियोजन पक्ष की गवाही की सुनवाई न्यायालय की सुनवाई का सबसे अधिक प्रतिशत होती है, हालांकि जब समय के आवंटन की बात आती है, तो न्यायालय ें व्यक्तिगत दलीलों और जारी करने के लिए अधिक मिनट समर्पित करती हैं।

2 परियोजना के लिए प्रेरणा दिल्ली उच्च न्यायालय की राज्य न्यायालय प्रबंधन प्रणाली समिति (एससीएमएस) के सदस्यों में से एक न्यायमूर्ति रवींद्र भट के साथ बातचीत में न्यायमूर्ति एम. एन. वेंकटचलैह (पूर्व सीजेआई) की एक टिप्पणी थी।

/

[2023] 15 एस सी आर।

सभी आदेशों का।दीवानी मामलों में, विविध सुनवाई आम है, लेकिन यदि किसी भी आदेश की कार्यवाही में अधिक समय मिलता है, तो भी न्यायाधीश किसी भी आदेश या निर्णय की सुनवाई के लिए अधिक समय आवंटित करते हैं।

26. मेल्विन एम. बेली, कैलिफोर्निया बार के एक सदस्य, ने अपने लेख शीर्षक में

“कानून की देरीःदीवानी मुकदमेबाजी में अनावश्यक देरी में सुधार ",

जिसे बेली सोसायटी के लिए एक परियोजना के रूप में तैयार किया गया था, ने नोट किया है "परीक्षण में देरी"

या अमेरिकी कानूनी प्रणाली की अवधि।सिस्टम का बैकलॉग

यह इतना विशिष्ट हो गया है कि एक वादी को दावा की गई साधारण व्यक्तिगत चोट के मुकदमे के लिए 5 साल इंतजार करना पड़ता है।यदि कोई अपील की जाती है, तो वादी के घायल होने के 10 साल बाद मामले का अंतिम निपटान हो सकता है और देरी में प्रमुख योगदानकर्ताओं के रूप में निम्नलिखित कारकों को रेखांकित किया गया हैः

((i) न्यायपालिका द्वारा न्यायालय प्रणाली का अप्रत्यक्ष प्रबंधन।((ii) मुकदमेबाजी में भारी वृद्धि।

(iii) कई न्यायाधीशों और वकीलों के विलंब का दर्शन, और (iv) न्यायालय के कैलेंडर में आपराधिक या दीवानी मामलों की प्राथमिकता।उपरोक्त समस्याओं से निपटने के लिए, संभावित समाधान के रूप में निम्नलिखित उपचारात्मक उपायों का सुझाव दिया गया थाः

1) कुछ मामलों को संभालने के लिए सरोगेट न्यायाधीशों (लेखा परीक्षक, रेफरी, अस्थायी न्यायाधीश) की नियुक्ति।सरोगेट न्यायाधीशों का उपयोग करने का विचार औपचारिक परीक्षणों के अंतर्गत अनावश्यक निर्णय से बचना है।मैसाचुसेट्स में इसका पालन किया जाता है, जहां न्यायालय द्वारा नियुक्त लेखा परीक्षक या रेफरी, जो वकीलों का अभ्यास कर रहे थे, मोटर वाहन अपकृत्य मामलों का निर्णय लेते थे।वे न्यायालय को अपने तथ्यों और निष्कर्षों की रिपोर्ट करते हैं और पक्षकार लेखा परीक्षक की रिपोर्ट को अंतिम रूप से स्वीकार कर सकते हैं या मुकदमे का अनुरोध कर सकते हैं।यदि मामला सुनवाई के लिए जाता है, तो लेखा परीक्षक के निष्कर्ष प्रथम दृष्टया सबूत हैं और जूरी को पढ़े जा सकते हैं।

2) विलंब के लिए प्रतिवादी के प्रोत्साहन को हटाने के लिए निर्णय के समय के बजाय घटना के समय से पूर्वव्यापी रूप से अर्जित ब्याज का अधिरोपण।

3) दीवानी मामलों को आपराधिक मामलों के बराबर करना ताकि दीवानी मामलों को हड़पा न जा सके।

4) एक आवश्यकता है कि न्यायाधीश रात में मुकदमे की तारीखें निर्धारित करें और उन्हें सम्मानित करें, ताकि किसी एक वकील द्वारा मुकदमे में देरी न की जा सके।

965

यशपाल जैन बनाम सुशीला देवी और अन्य [अरविंद कुमार, जे.] 966

प्रक्रियात्मक कानूनों के खाते पर रोक

27. सबसे पहले, दीवानी मुकदमे में देरी के कारणों को इंगित करना आवश्यक है, अर्थात्ः

(i) सी. पी. सी. के प्रावधानों के सख्त अनुपालन की अनुपस्थिति; (ii) न्यायालय की प्रक्रियाओं का दुरुपयोग;

((iii) लंबे/प्रोलिक्स साक्ष्य और तर्क।सी. पी. सी. के प्रावधानों का गैर-उपयोग अर्थात् आदेश X (पहली सुनवाई में पक्षों की जांच);

(v) तुच्छ और परेशान करने वाले मुकदमे के लिए यथार्थवादी लागत का पुरस्कार न देना;

(vi) न्यायिक अधिकारियों और वकीलों के लिए पर्याप्त प्रशिक्षण और उचित अभिविन्यास पाठ्यक्रम की कमी;

((vii) मामलों की प्राथमिकता का अभाव;

(viii) जवाबदेही और पारदर्शिता का अभाव।

28. उपरोक्त कारणों के अलावा, अन्य महत्वपूर्ण कारणों में निचली अदालतों की अति-सहिष्णु प्रकृति शामिल है, जब वे टोपी की बूंद पर स्थगन देने के लिए अपनी ज़ैतून शाखा का विस्तार करते हैं और इस तरह पूरी न्यायिक प्रक्रिया को रोक देते हैं।यह समझना महत्वपूर्ण है कि न्याय के पहियों को केवल मुड़ना नहीं चाहिए, उन्हें बिना किसी घर्षण के घूमना चाहिए, बिना किसी अनुचित देरी के कारण इसे रोके रखना चाहिए।यह ऐसे कारणों से है कि न केवल वादी जनता द्वारा बल्कि आम जनता द्वारा भी व्यवस्था का उपहास किया जा रहा है, जिससे जनता के मन में देरी के निरंतर भय के संकेत दिखाई दे रहे हैं जो विवाद के समाधान के दौरान हो सकता है और उन्हें न्याय के दरवाजे पर दस्तक देने से रोक सकता है।व्यवस्था के सभी हितधारकों को इस खतरनाक स्थिति के प्रति सचेत रहना होगा और न्यायिक प्रक्रिया की धारा को प्रदूषित करने के किसी भी प्रयास को विफल करना होगा और इससे सख्ती से निपटने की आवश्यकता है और उन्हें शुरुआत में ही खत्म कर दिया जाना चाहिए, अन्यथा व्यवस्था में जनता का विश्वास धीरे-धीरे कम हो जाएगा।चाहे वह वादी जनता हो या बार का सदस्य हो या न्याय वितरण की प्रक्रिया से जुड़ा कोई भी व्यक्ति हो, उसे किसी भी तरह से उक्त प्रक्रिया में देरी करके न्यायिक प्रक्रियाओं को कमजोर करने की अनुज्ञात नहीं दी जानी चाहिए।जैसा कि इस द्वारा आयोजित किया गया है

टी. अरिवंदम बनाम में न्यायालय । टी. वी. सत्यपाल और एक और आकाशवाणी (1977) 4 एससीसी

/

[2023] 15 एस सी आर।

467 एक गैर-जिम्मेदार मुकदमे या मुकदमे का जवाब एक सतर्क न्यायाधीश होगा।इस सादृश्य को तत्काल मामले में और सभी लंबित मामलों में आवश्यक रूप से यह अभिनिर्धारित करके विस्तारित करने की आवश्यकता है कि न्याय के वितरण की प्रक्रिया में प्रत्येक हितधारक को न्याय के वितरण में किसी भी देरी की गुंजाइश दिए बिना तेजी से, परिश्रमपूर्वक कार्य करने की आवश्यकता है।इस प्रकार, प्रत्येक न्यायालय के पीठासीन अधिकारी के कंधों पर एक भारी जिम्मेदारी होती है, जिन्हें ऐसे लापरवाह कृत्यों और न्याय के त्वरित वितरण को विफल करने का प्रयास करने वाले व्यक्तियों के खिलाफ सतर्क और सतर्क रहना चाहिए।पीठासीन अधिकारी पर विशेष जोर देने के साथ इसमें शामिल सभी पक्षों से प्रतिक्रिया की उम्मीद की जाती है।पीठासीन अधिकारी को यह सुनिश्चित करने के लिए उचित परिश्रम करना चाहिए कि कार्यवाही प्रभावी ढंग से और अनावश्यक देरी के बिना संचालित की जाए।जबकि बार के सदस्यों के साथ एक मैत्रीपूर्ण और सहयोगात्मक वातावरण बनाए रखना महत्वपूर्ण है, इसका दुरुपयोग बार-बार स्थगन अनुरोधों के बहाने के

रूप में नहीं किया जाना चाहिए।इस समय बार के विद्वान सदस्यों के लिए सावधानी का एक शब्द भी आवश्यक होगा क्योंकि उन्हें न्याय के वितरण के रथ का एक और पहिया माना जाता है।उन्हें स्थगन की मांग करने में सावधानी बरतनी चाहिए, वह भी पुराने मामलों या दशकों से लंबित मामलों में और किसी भी कारण से स्थगन की मंजूरी के लिए अनुरोध या प्रार्थना करने से बचना चाहिए और पीठासीन अधिकारी की अच्छाई को अपनी कमजोरी के रूप में नहीं लेना चाहिए।

29. वास्तव में, सी. पी. सी. के प्रावधान का पूरी तरह से उपयोग करने से देरी कम होगी।यह अदालतों के पीठासीन अधिकारियों द्वारा सी. पी. सी. के कई प्रावधानों को लागू न करने के कारण कार्यवाही में देरी या विवाद के तार्किक निष्कर्ष तक नहीं पहुंचने का एक कारण या कारण है।30. तत्काल मामले में 1982 के वर्तमान वाद संख्या 2 के पिछले 41 वर्षों से लंबित होने का तथ्य इस तथ्य का प्रतिबिंब है कि कैसे कुछ दीवानी अदालतें काम कर रही हैं और यह भी दर्शाता है कि कैसे हितधारक प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से ऐसी देरी में योगदान दे रहे हैं।निचली अदालतों या विशेष रूप से निचली अदालतों द्वारा अपनाई जा रही प्रक्रिया सी. पी. सी. के स्पष्ट प्रावधानों के विपरीत है। यह भी देखा जा सकता है कि पार्टी से प्रेरित देरी होती है।आदेश VIII नियम (1) के अंतर्गत यह निर्धारित किया गया है कि एक प्रतिवादी पहली सुनवाई पर या उससे पहले या 30 दिनों के भीतर, या 90 दिनों के भीतर, जैसा कि न्यायालय अनुमति दे, अपने बचाव का एक लिखित बयान प्रस्तुत करेगा।अधिकांश मामलों में, इस तरह का लिखित बयान प्रस्तुत करने में कोई अड़चन नहीं होगी और 967 के लिए कोई स्थगन नहीं दिया जाना चाहिए।

कथित उद्देश्य को छोड़कर एक अच्छा कारण दिखाया गया है, और उचित मामलों में, लागत विपरीत पक्ष को दी जानी चाहिए, अर्थात् यथार्थवादी लागत।लेकिन ऐसा शायद ही कभी पाया जाता है।लिखित बयान में देरी करना और स्थगन की मांग करना भी पक्षकारों द्वारा कार्यवाही में देरी करने के लिए मुकदमेबाजी के लिए उपयोग की जाने वाली एक और रणनीति है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि कैलाश सहित निर्णयों में देरी की जाती है।

बनाम नानकू **2005 (4)** एस**.** सी**.** सी**. 480,** सीरम एडवोकेट्स बार एसोसिएशन**,** तमिलनाडु बनाम भारत संघ**,** ए**.** आई**.** आर**. 2005** एस**.** सी**. 3353**।भरत कालरा बनाम राज किशन छाबड़ा **(2022)** एस**.** सी**.** सी**.** ऑनलाइन एस**.** सी**. 613** और शोराज सिंह बनाम चरण सिंह

(2018) एस. सी. सी. ऑनलाइन सभी 6613 सी. पी. सी. के अंतर्गत निर्धारित समय सीमा को निर्देशिका माना गया है और अनिवार्य नहीं है जिसका मतलब यह नहीं है कि यदि मांगा जाए तो स्थगन केवल पूछने के लिए दिया जाना चाहिए।जब ऐसी प्रार्थना ईमानदारी से की जाती है और प्रार्थना प्रामाणिक इरादे से की जाती है, जिसे हमें कम से कम एक शपथ के

माध्यम से स्पष्ट शब्दों में प्रदर्शित करना होगा, तो ऐसी प्रार्थनाओं पर विचार किया जाना चाहिए क्योंकि अन्यथा विधायी जनादेश का उद्देश्य विफल हो जाएगा और 2002 के अधिनियम 22 द्वारा सी. पी. सी. में लाए गए संशोधन का उद्देश्य भी व्यर्थ हो जाएगा।दूसरे शब्दों में, यह उचित समय है कि देश भर के सभी विचारण न्यायालयों के पीठासीन अधिकारी आदेश VIII के नियम (1) के उप-नियम (1) के अंतर्गत निर्धारित समय अनुसूची को सख्ती से लागू करें, बजाय इसके कि उक्त प्रावधान को निर्देशिका को उसके अतार्किक उद्देश्य तक विस्तारित किया जाए, भले ही किसी विशेष मामले की परिस्थितियों में समय बढ़ाने की आवश्यकता न हो।यद्यपि सी. पी. सी. का आदेश XVII "स्थगन" शीर्षक के अंतर्गत इंगित करता है, यह स्पष्ट रूप से उस प्रक्रिया को स्पष्ट करता है जिसे मुकदमे के मामले में दीवानी अदालतों द्वारा अपनाए जाने की आवश्यकता है, जैसा कि उक्त प्रावधान के सादे अध्ययन से स्पष्ट होगा, ऐसा लगता है कि सभी हितधारकों द्वारा पूरी तरह से दृष्टि खो दी गई है, जिसे दीवानी मामलों के निपटारे में देरी के मूल कारणों में से एक माना जा सकता है।सी. पी. सी. के आदेश XVII को निकालना उपयुक्त और उचित होगा और इसमें लिखा है:

आदेश **XVII**

"1. न्यायालय समय दे सकता है और सुनवाई स्थगित कर सकता है "(1) न्यायालय , यदि पर्याप्त कारण दिखाया जाता है, तो वाद के किसी भी चरण में पक्षों या उनमें से किसी को समय दे सकता है, और समय-समय पर लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों के लिए वाद की सुनवाई स्थगित कर सकता है:

बशर्ते कि वाद की सुनवाई के दौरान किसी पक्ष को ऐसा कोई स्थगन तीन बार से अधिक नहीं दिया जाएगा।

/

[2023] 15 एस सी आर।

(2) स्थगन की लागत।-ऐसे प्रत्येक मामले में न्यायालय वाद की आगे की सुनवाई के लिए एक दिन का समय लेगा, और

[स्थगन के कारण होने वाली लागतों या ऐसी अधिक लागतों के बारे में ऐसे आदेश देगा जो न्यायालय समझता है:

बशर्ते कि -

(क) जब वाद की सुनवाई शुरू हो जाती है, तो यह दिन-प्रतिदिन तब तक जारी रहेगा जब तक कि उपस्थित सभी गवाहों की जांच नहीं हो जाती है, जब तक कि न्यायालय यह निर्णय नहीं देता है कि उसके द्वारा दर्ज किए जाने वाले असाधारण कारणों के लिए, सुनवाई को अगले दिन से आगे स्थगित करना आवश्यक है।

(ख) किसी पक्ष के अनुरोध पर कोई स्थगन नहीं दिया जाएगा, सिवाय इसके कि परिस्थितियाँ उस पक्ष के नियंत्रण से बाहर हों।

(ग) यह तथ्य कि किसी पक्ष का वकील किसी अन्य न्यायालय में लगा हुआ है, स्थगन का आधार नहीं होगा।

((घ) जहां किसी वादी की बीमारी या किसी अन्य न्यायालय में उसके नियुक्त होने के अलावा किसी अन्य कारण से मामले का संचालन करने में उसकी असमर्थता को स्थगन के लिए एक आधार के रूप में सामने रखा जाता है, वहां न्यायालय तब तक स्थगन नहीं देगा जब तक कि यह संतुष्ट नहीं हो जाता है कि स्थगन के लिए आवेदन करने वाला पक्ष समय पर किसी अन्य पक्षकार को नियुक्त नहीं कर सकता था, (ङ) जहां कोई गवाह न्यायालय में मौजूद है, लेकिन कोई पक्ष या उसका पक्षकार मौजूद नहीं है या पक्ष या उसका पक्षकार, हालांकि न्यायालय में मौजूद है, गवाह की जांच या प्रतिपरीक्षा करने के लिए तैयार नहीं है, तो न्यायालय , यदि उसे लगता है कि वह गवाह का बयान दर्ज कर सकता है और ऐसे आदेश पारित कर सकता है जो वह मुख्य परीक्षा या प्रतिपरीक्षा के बारे में सोचता है। "

कर्नाटक उच्च न्यायालय ने एम. महालिंगम बनाम शशिकल के मामले में आई. एल. आर. कर्नाटक 4055 में इस नियम से निपटने का अवसर दिया था और यह निम्नानुसार देखा गया थाः

“17. आदेश XVII के नियम 1 के उप-नियम (2) का प्रावधान सिविल प्रक्रिया संहिता (संशोधन) नियम, 1976 द्वारा पेश किया गया था।इस परंतुक को लागू करने के पीछे का उद्देश्य और कारण 969 था

कि जब साक्ष्य की सुनवाई एक बार शुरू हो जाती है तो ऐसी सुनवाई दिन-प्रतिदिन जारी रखी जाएगी।उक्त प्रावधान को और अधिक सख्त बनाया जा रहा है ताकि एक बार इस स्तर पर पहुंचने के बाद, केवल अपरिहार्य कारणों से स्थगन दिया जाए।स्थगन की मंजूरी पर कुछ अन्य प्रतिबंध भी लगाए जा रहे थे।उक्त परंतुक को अधिनियमित करने का इरादा यह है कि जब मुकदमे की सुनवाई शुरू हो जाएगी, तब तक यह दिन-प्रतिदिन जारी रहेगा, जब तक कि उपस्थित सभी गवाहों से पूछताछ नहीं हो जाती।दूसरे शब्दों में, इसने प्रावधान किया कि एक मुकदमे की सुनवाई आपराधिक न्यायालय में सत्र मामले की तरह की जाए।इसलिए, नियम यह है कि एक बार मुकदमा शुरू होने के बाद, साक्ष्य को दिन-प्रतिदिन के आधार पर दर्ज किया जाना चाहिए।असाधारण मामलों में भी, यदि स्थगन आवश्यक हो जाता है, तो इसे केवल अगले दिन के लिए स्थगित करना पड़ता है।खंड-(बी) (सी) और (डी) पेश किए गए थे जो न्यायालय की उसमें निर्धारित आधारों पर स्थगन देने की शक्ति को सीमित करते थे।ये खंड यह स्पष्ट करते हैं कि यह तथ्य कि एक पक्ष का एक वकील दूसरे न्यायालय में लगा हुआ है, स्थगन का आधार नहीं है।यहां तक कि वादी की बीमारी और एक वकील की

मामला संचालित करने में असमर्थता भी स्थगन का आधार नहीं है, जब तक कि न्यायालय को यह संतोष न हो कि स्थगन के लिए आवेदन करने वाला पक्ष समय पर किसी अन्य वकील को नियुक्त नहीं कर सकता था।यह न्यायालय के लिए उन गवाहों के बयान दर्ज करने का भी प्रावधान करता है जो न्यायालय में उपस्थित हैं, जब उसे बुलाने वाले पक्ष और जिस पक्ष से जिरह करनी है, उक्त गवाह और उनके वकील उपस्थित नहीं हैं इसलिए, यह स्पष्ट है कि न्यायालय मुकदमे के शुरू होने से पहले स्थगन देने में उदार हो सकता है। लेकिन एक बार मुकदमा शुरू होने के बाद, न्यायालय पर यह दायित्व डाल दिया जाता है कि वह दिन-प्रतिदिन उक्त मुकदमे का संचालन करे जब तक कि उपस्थित सभी गवाहों से पूछताछ नहीं हो जाती।दुर्भाग्य से, यह प्रक्रिया जो 1976 से क़ानून की पुस्तक में है, उल्लंघन में अधिक अपनाई जाती है।निश्चित रूप से न्यायालयों द्वारा स्थगन की मांग की जाती है और उन्हें मंजूरी दी जाती है।उक्त प्रावधान को लागू करने में संसद की मंशा की सराहना नहीं की गई।परंतुक की शुरूआत के बावजूद, मुकदमों के मुकदमे में कोई उल्लेखनीय बदलाव नहीं हुआ।स्थगन हावी रहा और त्वरित मुकदमे में बाधा डालता रहा।इसलिए, संसद ने एक बार फिर विधि में संशोधन किया और अब स्थगन देने में अदालतों की शक्ति को नियंत्रित करने का प्रयास किया जाता है।

/

[2023] 15 एस सी आर।

18. इस बार सिविल प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 1999 द्वारा आदेश XVII के नियम 1 के उप-नियम (1) और (2) में काफी संशोधन किया गया था।संशोधन अधिनियम के पीछे का उद्देश्य और कारण यह था कि दीवानी मुकदमों और कार्यवाही के निपटारे में तेजी लाने के लिए हर संभव प्रयास किए जाने चाहिए ताकि न्याय में देरी न हो।अधीनस्थ विधान समिति (11 वीं लोकसभा) ने सिफारिश की कि मामलों के स्थगन के कारणों को दर्ज करने के साथ-साथ वास्तविक या अधिक लागत के अधिनिर्णय को अनिवार्य बनाया जाना चाहिए, न कि केवल विरोधी पक्ष के पक्ष में स्थगन की मांग करने वाले पक्षों के खिलाफ काल्पनिक लागत।एक मामले में तीन स्थगन तक की सीमा भी निर्धारित की गई है।

19. नियम 1 के संशोधित उप-नियम (1) में प्रावधान है कि मुकदमे के किसी भी चरण में, यदि पर्याप्त कारण दिखाया जाता है, तो न्यायालय लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों के लिए मुकदमे की सुनवाई स्थगित कर सकता है।इसलिए, केवल पूछने के लिए स्थगन नहीं दिया जा सकता है।इस तरह के स्थगन के लिए पर्याप्त कारण होना चाहिए। स्थगन देने से पहले, न्यायालय को उन कारणों को लिखित रूप में दर्ज करना होता है, जो मामले को स्थगित करने के लिए पर्याप्त कारण थे।नियम 1 के उप-नियम (1) का परंतुक स्थगन देने की न्यायालय की शक्ति पर प्रतिबंध लगाता है, जितना कि यह मुकदमे की सुनवाई के दौरान किसी पक्ष को तीन बार स्थगन देने की उक्त शक्ति को प्रतिबंधित करता है।इसलिए, न्यायालय मनमाने ढंग से, सनक से स्थगन देने की अपनी शक्ति का प्रयोग नहीं

कर सकता है और उसे अपनी सीमाओं को जानना चाहिए।नियम 1 के उप-नियम (2) में संशोधन न्यायालय की ओर से स्थगन के कारण होने वाले खर्चों के बारे में आदेश देना अनिवार्य बनाता है।इस नियम का उद्देश्य यह देखना है कि लागत का अधिरोपण उस पक्ष के लिए एक निवारक के रूप में कार्य कर सकता है जो कोई पर्याप्त कारण नहीं होने पर स्थगन की मांग कर रहा है।इस तरह की लागतों से मुकदमेबाजी की लागत बढ़ जाएगी और यह पक्ष को इस आधार पर स्थगन की मांग करने से रोक सकता है।

20. उपरोक्त प्रावधान में विधायी जनादेश के बावजूद, अदालतें और वकील उक्त वैधानिक प्रावधानों और दिन-प्रतिदिन निरंतर परीक्षण आयोजित करने की आवश्यकता की अनदेखी करना जारी रखते हैं।अदालतें, व्यवहार में, नियम को गहराई से दफन कर चुकी हैं और अंतिम आधार पर स्थगन दे रही हैं।प्रत्येक मामले में इन प्रावधानों का शीघ्रता से न्याय प्रदान करने की भावना के अनुपालन की तुलना में उल्लंघन में अधिक सम्मान किया जाता है।यह दुर्लभ 971 है।

यशपाल जैन बनाम सुशीला देवी और अन्य [अरविंद कुमार, जे.] 972

वास्तव में जब कोई न्यायालय इस नियम के संदर्भ में लगातार मुकदमा चलाती है।यदि केवल संहिता के प्रावधानों का अक्षरशः पालन किया जाता, तो मामलों के निपटारे में देरी की शिकायत काफी कम हो जाती।विधि के शासन के लिए इस देश के सभी नागरिकों द्वारा विधि के प्रति सम्मान की आवश्यकता होती है।न्यायाधीश और वकील जो न्यायालय के अधिकारी हैं, कोई अपवाद नहीं हैं।सबसे पहले, उन्हें विधि के शासन, यानी इन वैधानिक प्रावधानों का सम्मान करना चाहिए।बिना किसी अपवाद के वे इन प्रावधानों को अक्षर और भावना से लागू करने में किसी भी तरह की बाधा का अनुरोध नहीं कर सकते हैं।वे इन वैधानिक प्रावधानों के अनुसार कार्य करने के लिए कर्तव्यबद्ध हैं।कानूनी रूप से हमसे जो करने की अपेक्षा की जाती है, उसे किए बिना हम गलत पेड़ पर भौंक रहे हैं और इस प्रक्रिया से हम खुद को धोखा दे रहे हैं।संहिता में किसी भी संख्या में संशोधन या विधि में सुधार के लिए किसी भी प्रभाव का कोई प्रभाव नहीं होगा, जब तक कि अदालतें संहिता में निहित वैधानिक प्रावधानों को प्रभावी नहीं बनाती हैं।यदि न्यायालय विधि को लागू नहीं करते हैं, तो कोई भी अधिवक्ताओं या वादियों को दोष नहीं दे सकता है।यदि इन नियमों को अक्षरशः लागू किया जाता है, तो इससे कुछ असुविधा और कठिनाई हो सकती है, क्योंकि एक सदी से अधिक समय से, न्यायाधीश, वकील और वादी न्यायालय में एक विशेष वातावरण के आदी हैं।अदालतों में यही माहौल है, जिसका कोई कानूनी समर्थन नहीं है और यही मामलों के निपटारे में देरी का कारण है।इसलिए, मामलों के तेजी से निपटारे के हित में यह सही समय है, इन नियमों को लागू किया जाता है; एक बार लागू होने के बाद, समय के साथ, वकील और वादी कतार में आ जाएंगे।संशोधित इन वैधानिक प्रावधानों को लागू करने के लिए, न्यायाधीशों के बीच मन में बदलाव की आवश्यकता है और उनमें प्रचलित प्रथा से हटने का साहस होना चाहिए।उन्हें खुद को याद दिलाना चाहिए कि अब तक इन प्रावधानों

का पालन नहीं किया जाता है और अदालतों में अपनाई जाने वाली प्रक्रिया क़ानून के अंतर्गत प्रदान की गई प्रक्रिया से पूरी तरह से अलग थी और इसलिए इसका कोई कानूनी आधार नहीं है।यही मामलों के निपटारे में देरी का वास्तविक कारण है।इसलिए, समय की आवश्यकता है कि न्यायाधीशों की ओर से और दूसरी ओर वकीलों और वादियों की ओर से मानसिक दृष्टिकोण में बदलाव किया जाए।शुरुआत तो होनी ही चाहिए।यह केवल न्यायाधीशों और न्यायाधीशों द्वारा किया जाना है।संसद द्वारा की गई आलोचना और विधि में संशोधन के बावजूद, यदि न्यायाधीश संवेदनशील नहीं हैं और मामलों के त्वरित निपटारे के स्पष्ट उद्देश्य से बनाए गए इन प्रावधानों को लागू नहीं करते हैं, तो न्यायाधीश अपने कर्तव्य में विफल होंगे।इसलिए, कोई भी दोषी नहीं हो सकता है

/

[2023] 15 एस सी आर।

मामलों के निपटारे में देरी के लिए संहिता।संहिता के प्रावधानों का पालन नहीं करने और इन वैधानिक प्रावधानों के पीछे के दर्शन को न जानने के कारण देरी हुई है।अब भी न्यायाधीशों और वकीलों के लिए वैधानिक प्रावधानों को लागू करने और वादियों को तेजी से न्याय देने में बहुत देर नहीं हुई है।समय आ गया है कि इस बीमारी का इलाज सभी स्तरों पर समान रूप से किया जाना चाहिए।

21. वास्तव में यह दृष्टिकोण सिविल प्रक्रिया संहिता पर रिपोर्टों में विधि आयोग द्वारा की गई टिप्पणियों से समर्थन प्राप्त करता है:“"न्यायिक प्रशासन के सुधार" पर भारत के विधि आयोग की 14 वीं रिपोर्ट में, आयोग ने इस बात पर चिंता व्यक्त की है कि अदालतें इस बात की सराहना करने में विफल रही हैं कि आदेश 17 नियम 1 किसी मामले की सुनवाई, एक बार शुरू होने के बाद, दिन-प्रतिदिन तब तक जारी रखने पर विचार करता है जब तक कि उसे समाप्त नहीं कर दिया जाता है।इसने चिंता के साथ नोट किया कि न्यायपालिका को लगता है कि बाधित सुनवाई एक नियम होना चाहिए और दिन-प्रतिदिन की सुनवाई अपवाद होनी चाहिए।वकील और अधीनस्थ न्यायपालिका दोनों अभी भी निरंतर मुकदमे से इनकार करके इन प्रावधानों की अवहेलना करते रहते हैं।27 विधि आयोग की रिपोर्ट इस प्रकार है:

“एक लोकप्रिय धारणा है कि कानूनी प्रक्रिया की तकनीकीताओं का दोहन किया जा सकता है और यदि वांछित हो तो एक मामला लगभग अनिश्चित रूप से जारी रहता है।एक कमजोर मामले में, स्थगन के लिए कई आवेदनों के अलावा, तुच्छ अंतर्वर्ती आवेदन किए जाते हैं, जैसे कि अभिवचनों के संशोधन या मुद्दों के संशोधन के लिए आवेदन, अनावश्यक गवाहों को बुलाने पर गवाहों की परीक्षा आदि, ये रणनीति एक अनुभवी और चतुर न्यायाधीश के सामने सफल नहीं होती हैं।वे केवल उन न्यायाधीशों के समक्ष सफल होते हैं जिनके पास पर्याप्त अनुभव नहीं होता है।और इस तरह की रणनीतियाँ पालन के कारण नहीं, बल्कि प्रक्रिया के नियमों का पालन न करने के कारण सफल होती हैं।इस मद के अंतर्गत देरी, इसलिए,

प्रक्रिया में किसी भी दोष के कारण नहीं है।प्रक्रिया के नियमों का उद्देश्य न्याय में देरी करना या उसे पराजित करना नहीं है। "

22. इसलिए, स्थगन की मंजूरी के लिए प्रार्थना पर विचार करते समय, विधायी इरादे को ध्यान में रखना आवश्यक है।मुकदमा शुरू होने के बाद, विधायी अधिदेश है, यह दिन-प्रतिदिन जारी रहेगा जब तक कि उपस्थित सभी गवाहों से पूछताछ नहीं हो जाती।यहां तक कि अगले दिन के बाद भी स्थगन देने के लिए भी अपवादात्मक कारण 973

यशपाल जैन बनाम सुशीला देवी और अन्य [अरविंद कुमार, जे.] 974

इसका अस्तित्व होना चाहिए और सुनवाई को अगले दिन के बाद स्थगित करने से पहले इसे लिखित रूप में दर्ज किया जाना चाहिए।परंतुक को पढ़ने से यह स्पष्ट होता है कि उप-नियम (1) के परंतुक में निहित तीन स्थगनों की सीमा लागू होती है जहां उन परिस्थितियों के कारण स्थगन दिया जाना है जो उस पक्ष के नियंत्रण से बाहर हैं।ऐसे मामलों में भी जो किसी पक्ष के नियंत्रण से परे परिस्थितियों की श्रेणी में सख्ती से नहीं आते हैं, न्यायालय उच्च लागत के प्रावधानों का सहारा लेकर, जिसमें तीन गुना से अधिक दंडात्मक लागत अनुदान स्थगन भी शामिल हो सकता है, उस अन्याय को ध्यान में रखते हुए जो इसके इनकार के परिणामस्वरूप हो सकता है, किसी मामले के विशिष्ट तथ्यों के संदर्भ में और उस पक्ष को क्षतिपूर्ति करता है जिसे इस तरह के स्थगन से असुविधा होती है।उक्त लागत काल्पनिक नहीं हो सकती है।यह यथार्थवादी होना चाहिए।जहां तक संभव हो, दूसरे पक्ष द्वारा की गई वास्तविक लागत का भुगतान किया जाएगा, जहां स्थगन टालने योग्य पाया जाता है, लेकिन किसी पक्ष की लापरवाही या आकस्मिक दृष्टिकोण के कारण दिया जा रहा है या सहजता की प्रगति में देरी करने की मांग की जा रही है।इसलिए, संसद द्वारा एक प्रयास किया जाता है ताकि न्यायालय वादी पर पूर्ण नियंत्रण रख सके और पक्षकारों को मुकदमे के पाठ्यक्रम को नियंत्रित करने से रोका जा सके।पूरा उद्देश्य पक्षों को केवल स्थगन के लिए स्थगन की मांग करने से रोकना है।यदि कोई पक्ष स्थगन की विलासिता चाहता है, तो उसे इस तरह की विलासिता के लिए भुगतान करना चाहिए और विरोधी पक्ष जिसे असुविधा होती है, उसे मुआवजा दिया जाना चाहिए।दूसरे शब्दों में, मुकदमे की लागत को एक ऐसे पक्ष के रूप में अधिक किया जाना चाहिए जो त्वरित मुकदमे में रुचि नहीं रखता है।एक व्यक्ति जो न्याय के मार्ग में बाधा डालना चाहता है, मामलों के निपटारे में देरी करना चाहता है, न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग करना चाहता है और अपनी धन शक्ति के आधार पर अपने प्रतिद्वंद्वी को परेशान करना चाहता है, उसके लिए मुकदमा महंगा हो जाना चाहिए जो अब नहीं है। इसलिए, वादी को स्थगन की मांग करने से रोकने के लिए लागत लगाने का यह प्रावधान, इस प्रकार, मामलों के निपटारे में देरी, को पूरी तरह से लागू किया जाना चाहिए।यह मुकदमे की प्रक्रिया को नियंत्रित करने और मुकदमे में तेजी लाने के लिए न्यायाधीश के शस्त्रागार में एक हथियार है।इस प्रावधान के बावजूद यदि न्यायाधीश इन संशोधनों के महत्व और महत्व को नहीं समझते हैं और पक्षों को मुकदमेबाजी के पाठ्यक्रम को नियंत्रित करने की अनुमति

नहीं देते हैं, तो यह केवल इन वैधानिक प्रावधानों को लागू करने के लिए उनकी ओर से इच्छा की कमी या इन वैधानिक प्रावधानों को प्रभावी बनाने में उनकी अक्षमता को दर्शाता है।23. जब वादी मामलों के निपटारे में देरी की शिकायत करते हैं, तो वे अधिकार के रूप में स्थगन की मांग नहीं कर सकते हैं, क्योंकि यह उनके खिलाफ है।

/

[2023] 15 एस सी आर।

ब्याज।एक पक्ष के कहने पर स्थगन, दूसरे पक्ष को असुविधा में डालता है, जो बदले में ऐसी शिकायतों को जन्म देता है।लेकिन विभिन्न कारणों से स्थगन आवश्यक हो सकता है। इसलिए, ऐसी परिस्थितियों में स्थगन देना न्याय के हित में होगा, लेकिन साथ ही साथ असुविधाजनक पक्ष को उचित रूप से मुआवजा दिया जाना चाहिए।यह इस पृष्ठभूमि में है कि सी. पी. सी. के आदेश XVII के नियम 1 के प्रावधान को, जैसा कि संशोधित किया गया है, समझा जाना चाहिए और लागू किया जाना चाहिए।मुकदमे के एक पक्ष को दिन-प्रतिदिन के मुकदमे के लिए कोई शिकायत नहीं हो सकती है और इसके विपरीत उसे इसका स्वागत करना चाहिए।केवल उन्हीं वादियों को कोई शिकायत हो सकती है जो न्यायिक प्रक्रिया का दुरुपयोग करना चाहते हैं और इस कानूनी तंत्र का उपयोग अपने विरोधियों के खिलाफ उत्पीड़न के हथियार के रूप में करना चाहते हैं।यही कारण है कि ये संशोधित प्रावधान न्यायिक प्रक्रिया के इस तरह के दुरुपयोग को रोकने के लिए अदालतों के काम आते हैं।

केस फ्लो प्रबंधन प्रणाली नियमःएक उपेक्षित जीवन रक्षक

31. सलेम बार एसोसिएशन में इस न्यायालय की सिफारिश पर

बनाम भारत संघ ए. आई. आर. 2003 एस. सी. 189 = 2003 (1) एस. सी. सी. 49 एक समिति

भारत में केस फ्लो प्रबंधन प्रणाली के कार्यान्वयन पर आवेदन का अध्ययन करने के लिए नियुक्त किया गया था, और जवाब में, 'केस फ्लो प्रबंधन'

उच्च न्यायालयों और अधीनस्थ न्यायालयों के लिए नियम सावधानीपूर्वक बनाए गए थे।

इन दिशा-निर्देशों ने 'राष्ट्रीय मिशन' में उल्लिखित सुझावों को प्रतिबिंबित किया

न्याय और कानूनी सुधार के वितरण के लिए, जो एक व्यापक प्रावधान के रूप में कार्य करता है

2009 से 2012 तक अपनी रणनीतिक पहलों के माध्यम से न्यायिक सुधारों के लिए खाका। इसके अलावा, केस मैनेजमेंट सिस्टम पर जस्टिस ए. एम. खानविलकर समिति की शुरुआत का उद्देश्य इन प्रभावी संगठनों के साथ तालमेल बिठाना था।उपरोक्त सिफारिशों के आधार पर अधिकांश राज्यों ने केस फ्लो मैनेजमेंट की अवधारणा को अपनाया है और 2005 से

न्याय का समय पर वितरण सुनिश्चित करने के लिए अपने स्वयं के नियम विरचित हैं। हालांकि, कुछ राज्यों ने अभी तक नियम नहीं बनाए हैं।हम उन उच्च न्यायालयों के माननीय मुख्य न्यायाधीशों से अनुरोध करते हैं कि वे ऐसे नियम बनाने के लिए तत्काल कदम उठाएं जहां उक्त नियम अभी विरचित जाने हैं।

32. चाहे जो भी हो, केवल नियम बनाना ही समस्या को समाप्त करने के लिए पर्याप्त नहीं होगा, जब तक कि ऐसे नियमों के निर्माण में अंतर्निहित भावना को प्रभावी ढंग से लागू नहीं किया जाता है।जिस तरीके, तरीके और तरीके से इसे लागू करने की आवश्यकता है, वह 975 के हाथों में है

संबंधित उच्च न्यायालय।इस संबंध में, हालांकि कई उच्च न्यायालयों ने इसकी निगरानी के लिए समितियों (अलग-अलग नामों के साथ) का गठन किया है, लेकिन प्रभावी कार्यान्वयन गुमनामी में चला गया है।इस प्रकार, उच्च न्यायालयों की ओर से यह सुनिश्चित करना अनिवार्य होगा कि जिस उद्देश्य के साथ ऐसी समितियों का गठन किया गया था, वह कागजों पर न रहे, बल्कि कम से कम दो महीने में एक बार जिला न्यायाधीशों के माध्यम से निचली अदालतों से रिपोर्ट प्राप्त करके और विशेष रूप से पुराने मामलों पर नजर और निगरानी रखते हुए निरंतर निगरानी द्वारा अपने अक्षर और भावना में लागू किया जाए।ऐसी समितियों को निगरानी प्रयासों के माध्यम से अपना ध्यान केंद्रित करना चाहिए ताकि बिना किसी उचित कारण के स्थगित होने वाले मामलों पर नजर रखी जा सके।जब इस तरह के अभ्यास को अत्यंत समर्पण के साथ किया जाता है, तो यह आवश्यक रूप से सकारात्मक परिणाम देगा।इसलिए, दोनों मौजूदा समितियों और संबंधित उच्च न्यायालयों द्वारा अभी तक गठित की जाने वाली समितियों को ऐसे नियम बनाने के उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए सभी प्रयास करने चाहिए।उच्च न्यायालयों के माननीय मुख्य न्यायाधीशों से अनुरोध है कि वे इन समितियों को सक्रिय करें और नियमों का कार्यान्वयन सुनिश्चित करें।इस पृष्ठभूमि में, न केवल बकाया राशि को कम करने के उद्देश्य से बल्कि त्वरित सुनवाई सुनिश्चित करने के उद्देश्य से मामले के प्रवाह प्रबंधन नियमों को मजबूत करने की दिशा में मुख्य न्यायाधीश के सम्मेलन, 2016 में अत्यंत चिंता के साथ टिप्पणियां की गईं।

संख्याएं शब्दों से ज्यादा बोलती हैं।राष्ट्रीय न्यायिक डेटा ग्रिड के आंकड़ों पर करीब से नज़र डालें

33. मुकदमेबाजी में सबसे गंभीर प्रशासनिक और संरचनात्मक देरी, न्यायिक देरी के कारण प्रतीत होती है।राष्ट्रीय न्यायिक डेटा ग्रिड के अनुसार, मामलों के लंबित होने में न्यायिक देरी के योगदान के लिए उपलब्ध आंकड़े चिंताजनक हैं।16.10.2023 पर संबंधित उच्च

न्यायालयों और समग्र दीवानी न्यायालयों के समक्ष मामलों की राज्यवार लंबितता निम्नानुसार है:

एस. नहीं		राज्य और उच्च न्यायालयों के नाम	उच्च न्यायालय		दीवानी अदालतें
		सिविल	अपराधी	सिविल	अपराधी
1	आंध्र प्रदेश 2,12,317		37,615	4,15,774	4,40,468

/	अरुणाचल प्रदेश (गुवाहाटी उच्च न्यायालय)	47,941	13,817	2,911	14,378
3	असम (गुवाहाटी उच्च न्यायालय)			98,763	3,38,828
/	बिहार (पटना उच्च न्यायालय)	1,08,550	87,779	5,07,039	3,022,705
/	छत्तीसगढ़ (छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय)	59,640	32,342	23,419	76,331
/	गोवा (बंबई उच्च न्यायालय)	6,01,362	1,14,309	26,040	30,521
7	गुजरात (गुजरात उच्च न्यायालय)	1,10,403	56,267	4,02,283	12,70,278
।	हरियाणा (पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय)	2,76,432	1,65,363	4,55,539	11,13,672
/	हिमाचल प्रदेश (हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय)	81,875	13,618	1,63,805	3,70,345
10	झारखंड (झारखंड उच्च न्यायालय)	37,565	46,895	85,359	4,21,577
/	कर्नाटक (कर्नाटक उच्च न्यायालय)	2,535,097	45,802	9,33,869	10,69,156
/	केरल (केरल उच्च न्यायालय)	1,99,169	55,659	5,56,950	13,70,576
/	मध्य प्रदेश (मध्य प्रदेश उच्च	2,74,085	1,75,924	3,68,346	16,37,442

	न्यायालय)				

977

/	महाराष्ट्र (बॉम्बे उच्च न्यायालय)			15,96,833	34,09,391
15	मणिपुर (मणिपुर उच्च न्यायालय)	4,567	493	5,049	2,670
/	मेघालय (मेघालय उच्च न्यायालय)	883	189	3,517	10,880
17	मिजोरम (गुवाहाटी उच्च न्यायालय)			2,980	3,120
/	नागालैंड (गुवाहाटी उच्च न्यायालय)			1421	2747
19	ओडिशा (उड़ीसा उच्च न्यायालय)	1,08,154	38,078	3,50,358	15,05,895
/	पंजाब (पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय)			3,93,004	5,24,061
21	राजस्थान (राजस्थान उच्च न्यायालय)	4,86,248	1,78,745	5,50,742	18,19,230
/	सिक्किम (सिक्किम उच्च न्यायालय)	119	39	522	1,126
23	तमिलनाडु (मद्रास उच्च न्यायालय)	4,89,316	58,164	7,48,895	6,56,014
/	तेलंगाना (तेलंगाना उच्च न्यायालय)	2,20,677	30,974	3,38,275	5,33,262
/	त्रिपुरा (त्रिपुरा उच्च न्यायालय)	1,075	138	11,719	32,952
26	उत्तराखंड (उत्तराखंड उच्च न्यायालय)	28,117	21,898	37,760	2,80,476

-	उत्तर प्रदेश (इलाहाबाद उच्च न्यायालय)	5,62,794	4,94,366	16,38,238	96,34,553
28	पश्चिम बंगाल (कलकत्ता उच्च न्यायालय)	1,69,651	27,275	609910	20,09,011
29	राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली (दिल्ली उच्च न्यायालय)	78,890	32,770	2,40,118	11,44,038
30	जम्मू और कश्मीर और लद्दाख (जम्मू और कश्मीर का उच्च न्यायालय)	36443	8195	78,981	1,95,903
31	अंडमान और निकोबार द्वीप समूह (कलकत्ता उच्च न्यायालय)			4,757	4,923
32	चंडीगढ़ (पंजाब और हरियाणा का उच्च न्यायालय)			23419	76331
33	लक्षद्वीप (केरल उच्च न्यायालय)			140	365
34	दादरा और नगर हवेली और दमन और दीव (बॉम्बे उच्च न्यायालय)			1412	1572
35	पुडुचेरी (मद्रास उच्च न्यायालय)			13,196	19,015
	कुल	67,31,370	17,36,714	1,06,91,343 3,30,43,812	

34. इसके अलावा, राष्ट्रीय न्यायिक डेटा ग्रिड के अनुसार, यदि हम चरण-वार विचाराधीनता पर विचार करते हैं, तो यह पता चलता है कि मामलों में अधिकांश विचाराधीनता साक्ष्य/तर्क/निर्णय चरण (43,22,478) में है, जिसके भीतर 979 मामले हैं।

अधिकतम विचाराधीनता सुनवाई और साक्ष्य के चरण में होती है।उपस्थिति/सेवा चरण (27,03,493) के दौरान भी उच्च विचाराधीनता होती है, जिसके भीतर अधिकतम विचाराधीनता उपस्थिति और सेवा/समन से संबंधित होती है।एन. जे. डी. सी. द्वारा बताए गए अधिकतम विचाराधीनता के पीछे के कारणों को उन मामलों के रूप में माना गया है जिन

पर रोक लगा दी गई है (9,69,262) ध्यान नहीं दिया गया (8,31,076) और अभिलेख की प्रतीक्षा की जा रही है (8,219,929)।

35. यह स्वीकार करना महत्वपूर्ण है कि शीघ्र न्याय के अक्सर उद्धृत लक्ष्य के लिए प्रयास करते समय, अदालतों, वादियों, कर्मचारियों और वकीलों को कुछ स्तर की असुविधा का सामना करना पड़ सकता है।हालाँकि, इस असुविधा को संविधान में निहित मौलिक कर्तव्यों के आलोक में पीछे हटना चाहिए, विशेष रूप से अनुच्छेद 51 ए (जे) जो प्रत्येक नागरिक को व्यक्तिगत और सामूहिक गतिविधि के सभी क्षेत्रों में उत्कृष्टता की दिशा में प्रयास करने के लिए बाध्य करता है ताकि राष्ट्र लगातार प्रयास और उपलब्धि के उच्च स्तर तक बढ़ सके। अनुच्छेद 51 ए को उत्कृष्टता की दिशा में प्रयास करने की दृष्टि से सकारात्मक रूप में समझा जाना चाहिए।लोगों को ऐसा आचरण नहीं करना चाहिए जिससे कोई उन पर आरोप लगा सके या उन्हें दोषी ठहरा सके।"उत्कृष्टता का अर्थ है ईमानदार प्रदर्शन।यह संविधान निर्माताओं के संस्थापकों का दृष्टिकोण है कि इस महान देश भारत के नागरिकों को आधे-अधूरे मन से काम करने के बजाय अनुकरणीय तरीके से कर्तव्यों का निर्वहन करना चाहिए। अनुच्छेद 51 ए के अंतर्गत परिकल्पित कर्तव्य नागरिकों के लिए अनिवार्य हैं।इसमें कोई संदेह नहीं है कि मौलिक कर्तव्यों को रिट द्वारा लागू नहीं किया जा सकता है और इस पृष्ठभूमि में यह समझना होगा कि सामान्य रूप से नागरिकों और विशेष रूप से न्यायिक वितरण प्रणाली के हितधारकों द्वारा किए जाने वाले कर्तव्यों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि वे विधि के अंतर्गत निर्धारित दायित्वों का उदाहरण के रूप में निर्वहन करें और दोषारोपण के योग्य न हों।

36. न्याय के पवित्र कक्षों में, जहां प्रत्येक नागरिक के अधिकारों और स्वतंत्रताओं की रक्षा की जाती है, हम एक महत्वपूर्ण मोड़ पर हैं।हमारी न्यायपालिका, जो हमारी लोकतांत्रिक प्रणाली की आधारशिला है, उन लोगों के लिए आशा की किरण के रूप में खड़ी है जो उपचार चाहते हैं।फिर भी, यह एक गंभीर सत्य है जिसका हमें अटूट संकल्प के साथ सामना करना चाहिए- देरी और विचाराधीनता के भय ने न्याय के वितरण पर एक लंबी छाया डाल दी है।इस पवित्र क्षेत्र में, जहां न्याय का पैमाना सटीकता के साथ संतुलन बनाने के लिए है, मामलों का बैकलॉग और अंतहीन देरी एक निराशाजनक चरम पर पहुंच गई है।समय की अथक यात्रा, जबकि यह कुछ के लिए घावों को ठीक कर सकती है,

/

[2023] 15 एस सी आर।

यह उन वादियों के लिए निराशा की खाई को गहरा करता है जो अपने अधिकारों के प्रवर्तन की प्रतीक्षा कर रहे हैं।इसलिए, यह न्यायशास्त्र के कक्षों में है कि हमें सुधार के स्पष्ट आह्वान पर अटूट तात्कालिकता के साथ ध्यान देना चाहिए।

37. यह निर्विवाद रूप से स्वीकार किया जाता है कि एक त्वरित और प्रभावशाली न्यायपालिका के महत्व को कम करके नहीं बताया जा सकता है।यह लोकतंत्र की आधारशिला है, अत्याचार के खिलाफ एक सुरक्षा कवच है, और व्यक्तिगत स्वतंत्रता की गारंटर है।जब न्याय को स्थगित किया जाता है तो उत्पीड़ितों की आवाज़ें, हाशिए पर पड़े लोगों के अधिकार, पीड़ितों के दावे-सभी खोखले हो जाते हैं।प्रत्येक लंबित मामला अधर में लटकी हुई आत्मा का प्रतिनिधित्व करता है, जो बंद होने और पुष्टि की प्रतीक्षा कर रहा है।हर देरी उन आदर्शों के लिए एक कारण है जो हमारी कानूनी प्रणाली को मजबूत करते हैं। अफसोस की बात है कि न्याय में देरी की अवधारणा यह है कि न्याय से इनकार करना केवल एक सच्चाई नहीं है, बल्कि एक अकाट्य सच्चाई है।

इस प्रकार, हम एक ऐसे चौराहे पर खड़े हैं, जो हमारी पसंद का नहीं है, बल्कि हमारे कर्तव्य का है, जहां हमारी न्यायपालिका में कानूनी सुधारों की तात्कालिकता को अतिरंजित नहीं किया जा सकता है, क्योंकि न्याय का पेंडुलम निर्बाध रूप से घूमना चाहिए।हमारे लोकतंत्र की इमारत एक ऐसी न्यायपालिका पर निर्भर करती है जो न्याय को एक विचार के रूप में नहीं बल्कि एक सर्वोपरि मिशन के रूप में प्रदान करती है।हमें अनुकूलन करना चाहिए, हमें सुधार करना चाहिए, और हमें यह सुनिश्चित करना चाहिए कि न्याय एक मृगजळ नहीं है, बल्कि सभी के लिए एक मूर्त वास्तविकता है।

38. इसलिए, इस प्रयास में, हम सभी हितधारकों-कानूनी बिरादरी, विधायिका, कार्यपालिका और स्वयं नागरिकों से आह्वान करते हैं कि वे देरी और विचाराधीनता के जाल को खोलने के लिए एक ठोस प्रयास में हाथ मिलाएं।हमें प्रक्रियाओं को सुव्यवस्थित करना चाहिए, बुनियादी ढांचे को मजबूत करना चाहिए, प्रौद्योगिकी में निवेश करना चाहिए और अपने समय की मांगों को पूरा करने के लिए अपनी न्यायपालिका को सशक्त बनाना चाहिए।

39. विलंब का समय बहुत पहले बीत चुका है, क्योंकि न्याय नौकरशाही की अक्षमता का शिकार नहीं हो सकता है।हमें अभी कार्रवाई करनी चाहिए, क्योंकि देर हो चुकी है और न्याय का आह्वान अटूट है।आइए, हम विधि के संरक्षक के रूप में, एक न्यायपूर्ण और न्यायसंगत समाज के वादे में अपने नागरिकों के विश्वास को बहाल करें।आइए हम तत्काल कानूनी सुधार की यात्रा शुरू करें, क्योंकि हम जो विरासत छोड़ेंगे वह एक राष्ट्र की नियति को आकार देगी।न्याय के कक्षों में, देरी और विचाराधीनता की प्रतिध्वनि सुधार के स्पष्ट आह्वान को डूबने न दें।अब समय आ गया है और न्याय किसी का इंतजार नहीं करता है। इसलिए, उच्च न्यायालयों के माननीय मुख्य न्यायाधीशों से निम्नलिखित अनुरोध किए जाते हैं और त्वरित न्याय सुनिश्चित करने के लिए निचली अदालतों को निर्देश जारी किए जाते हैं।

981

यशपाल जैन बनाम सुशीला देवी और अन्य [अरविंद कुमार, जे.] 982

आरई:प्वाइंट नं. 3

वनों के कारण, हम निम्नलिखित को पार करने के लिए आगे बढ़ते हैं

आदेश

1. दीवानी अपील की अनुज्ञात जाती है और नैनीताल में उत्तराखंड उच्च विचारण न्यायालय द्वारा 2013 की रिट याचिका (एम/एस) No.144 में पारित 28.11.2019 दिनांकित आदेश को दरकिनार कर दिया जाता है और निचली अदालत द्वारा पारित 09.05.2012 दिनांकित आदेश, जैसा कि 2012 की सिविल संशोधन संख्या 4 दिनांकित 13.12.2012 में कहा गया है, लागू होता है।2. निम्नलिखित निर्देश जारी किए गए हैं:

आई. जिला और तालुका स्तरों पर सभी अदालतें समन का उचित निष्पादन सुनिश्चित करेंगी और सी. पी. सी. के आदेश 5 नियम (2) के अंतर्गत निर्धारित समयबद्ध तरीके से इसकी निगरानी प्रधान जिला न्यायाधीशों द्वारा की जाएगी और आंकड़ों को इकट्ठा करने के बाद वे इसे उच्च न्यायालय द्वारा गठित समिति के समक्ष उसके विचार और निगरानी के लिए रखे जाने के लिए भेजेंगे।

ii.जिला और तालुका स्तर के सभी न्यायालय यह सुनिश्चित करेंगे कि लिखित विवरण निर्धारित सीमा के भीतर दिया जाए, जैसा कि आदेश VIII नियम 1 के अंतर्गत निर्धारित किया गया है और अधिमानतः 30 दिनों के भीतर और लिखित रूप में कारण बताएँ कि समय सीमा को 30 दिनों से आगे क्यों बढ़ाया जा रहा है जैसा कि सी. पी. सी. के आदेश VIII के उप-नियम (1) के परंतुक के अंतर्गत संकेत दिया गया है।

iii.जिला और तालुकों के सभी न्यायालय यह सुनिश्चित करेंगे कि अभिवचन पूरा होने के बाद, पक्षकारों को आदेश 10 में बताए गए दिन उपस्थित होने के लिए बुलाया जाना चाहिए और प्रवेश और अस्वीकृति दर्ज करनी चाहिए और न्यायालय वाद के पक्षकारों को धारा 89 की उप-धारा (1) में निर्दिष्ट न्यायालय के बाहर समझौते के किसी भी तरीके का विकल्प चुनने का निर्देश देगा और पक्षकारों के विकल्प पर ऐसे मंच या प्राधिकरण के समक्ष उपस्थिति की तारीख तय करेगा और समझौते के किसी भी तरीके का विकल्प चुनने वाले पक्षों की स्थिति में उस तारीख, समय और स्थान पर उपस्थित होने के लिए निर्देश जारी किए जाएंगे और पक्षकार इस प्रकार ऐसे निर्दिष्ट स्थान और समय पर बिना किसी और सूचना के ऐसे प्राधिकरण/मंच के समक्ष उपस्थित होंगे।

/

यह स्पष्ट करते हुए कि ए. डी. आर. सफल नहीं होने की स्थिति में, परीक्षण अगले दिन शुरू होगा और दिन-प्रतिदिन के आधार पर आगे बढ़ेगा, आदेश देते हुए कि परीक्षण दो महीने की अवधि से आगे किया जाए।

iv.धारा 89 (1) के अंतर्गत निर्धारित विवाद के समाधान के रूप में ए. डी. आर. का विकल्प चुनने में पक्ष की विफलता की स्थिति में न्यायालय को एक सप्ताह के भीतर अपने निर्धारण के लिए मुद्दों को तैयार करना चाहिए, अधिमानतः खुली न्यायालय में।

5. मुकदमे की तारीख तय करना पक्षों की ओर से पेश होने वाले विद्वान अधिवक्ताओं के परामर्श से होगा ताकि वे अपने कैलेंडर को समायोजित कर सकें।एक बार जब मुकदमे की तारीख तय हो जाती है, तो मुकदमे को दिन-प्रतिदिन के आधार पर यथासंभव आगे बढ़ना चाहिए।

(vi) जिला और तालुका न्यायालयों के विद्वान विचारण न्यायाधीश यह सुनिश्चित करने के लिए जहां तक संभव हो डायरी का रखरखाव करेंगे कि किसी भी दिन सुनवाई के लिए केवल उतने ही मामलों को संभाला जा सके और साक्ष्य की रिकॉर्डिंग पूरी की जा सके ताकि मामलों की अधिक भीड़ से बचा जा सके और इसके एक क्रम के रूप में स्थगन की मांग की जा सके और इस तरह हितधारकों को होने वाली किसी भी असुविधा को रोका जा सके।

vii.पक्षकारों का प्रतिनिधित्व करने वाले वकीलों को आदेश 11 और आदेश 12 के प्रावधानों के बारे में जानकारी दी जा सकती है ताकि विवाद के दायरे को कम किया जा सके और बार एसोसिएशनों और बार काउंसिलों की यह भी भारी जिम्मेदारी होगी कि वे समय-समय पर रिफ्रेशर पाठ्यक्रम आयोजित करें और अधिमानतः आभासी माध्यम से।

viii .विचारण न्यायालय आदेश XVII के नियम 1 के प्रावधानों का ईमानदारी से, सावधानीपूर्वक और बिना किसी असफलता के पालन करेंगे और एक बार मुकदमा शुरू हो जाने के बाद इसे नियम (2) के परंतुक के अंतर्गत विचार के अनुसार दिन-प्रतिदिन आगे बढ़ाया जाएगा।

ix.अदालतें यह सुनिश्चित करने के लिए लागत के भुगतान के प्रावधानों को सार्थक प्रभाव देंगी कि मुकदमे के विलंब के लिए कोई स्थगन नहीं मांगा गया है और इस तरह के स्थगन की स्थिति में विरोधी पक्ष को उचित रूप से मुआवजा दिया जाता है।

x. मुकदमे के समापन पर मौखिक दलीलों को तुरंत और लगातार सुना जाएगा और सी. पी. सी. के आदेश XX के अंतर्गत निर्धारित अवधि के भीतर निर्णय सुनाया जाएगा।

xi.प्रत्येक न्यायालय में 5 वर्ष से अधिक समय से लंबित मामलों से संबंधित आंकड़े प्रत्येक पीठासीन अधिकारी द्वारा महीने में एक बार प्रधान जिला न्यायाधीश को भेजे जाएंगे, जो (प्रधान जिला न्यायाधीश/जिला न्यायाधीश) इसे एकत्रित करेंगे और इसे आगे के कदम उठाने में सक्षम बनाने के लिए संबंधित उच्च न्यायालय ों द्वारा गठित समीक्षा समिति को भेजेंगे।

xii.संबंधित राज्यों के माननीय मुख्य न्यायाधीश द्वारा इस प्रकार गठित समिति की बैठक कम से कम दो महीने में एक बार होगी और वह संबंधित न्यायालय द्वारा किए जाने वाले सुधारात्मक उपायों का निर्देश देगी और पुराने मामलों (अधिमानतः जो 05 वर्षों से अधिक समय से लंबित हैं) की लगातार निगरानी भी करेगी।

यह भी स्पष्ट किया जाता है कि उपरोक्त निर्देशों के कार्यान्वयन के लिए आगे के निर्देश समय-समय पर, यदि आवश्यक हो, और जैसा कि इस न्यायालय द्वारा निर्देशित किया जा सकता है, जारी किए जाएंगे।

3. महासचिव को निर्देश दिया जाता है कि वह इस निर्णय की प्रति को सभी उच्च न्यायालयों के महापंजीयक को संबंधित मुख्य न्यायाधीशों के समक्ष विचार करने और उपयुक्त कदम उठाने के लिए प्रसारित करें, जैसा कि ऊपर कहा गया है।

4. हम लागत के बारे में कोई आदेश नहीं देते हैं।

द्वारा तैयार किए गए हेडनोटः

निर्देशों के साथ अपील की अनुज्ञात गई।

दिव्या पांडे